श्री

केसरियाजी तीर्थ का इतिहास.

सम्पादक:

शेठ चंदनमलजी नागोरी.

श्रीकेसरियाजी तीर्थ का इतिहास.

जिस में

प्राचीन प्रमाणादि का संग्रह है.

सम्पादक—

शेठ चंदनमलजी नागोरी.

छोटी सादडी (मेवाड)

प्रकाशक—

श्रीसद्गुण प्रसारक मित्रमंडल.

पो. छोटी सादडी (मेवाड)

दूसरी आवृत्ति २०००. संवत् १९९०. कीमत ।।।)

ग्रन्थकर्त्ताने सर्व हक्क
स्वाधीन रक्खे हैं।

क्रोधस्त्वया यदि विभो ! प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा बत कथं किल कर्मचौराः ? ॥
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिराऽपि लोके,
नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानि ? ॥

भावार्थ—हे भगवान् ! क्रोध का तो आपने पहले ही नाश कर दिया था इस लिये आश्चर्य होता है कि कर्मरूपी चोरों को—शत्रुओं को क्रोध विना कैसे जलाये ? जैसे ठंडा हिम (दाह) हरे वृक्षों को शीतलता से जला देता है इसी तरह बिना क्रोध किये जलाने में शीतलता भी काम देती है। अर्थात् शांति से काम लिया जाय तो वह भी मंजील पर पहुंचता है।

इति वचनात्.

मुद्रकः—
शेठ देवचंद दामजी
आनंद प्रेस—भावनगर.

ॐ ह्रीँ अर्हँ पद के उपासक

परमप्रभाविक योगिराज महात्मा श्री १०८
शांतिविजयजी साहब

समर्पण.

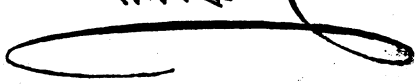

पूज्यपाद योगिराज महात्मा श्री १०८ श्री
शांतिविजयजी साहिबकी सेवायाम्
मु० माउंट आबू.

योगनिष्ठ प्रभाविक सन्तचरणमें वन्दना पुरःसरः निवेदन हो कि आप शासनशोभा व जीवरक्षा और तीर्थोन्नति के कार्यों में दत्तचित्त रहते हैं। और योग-महिमा के कारण आप की ओर जनता का पूज्यभाव अतुल व प्रशंसनीय है एतदर्थ गुणमाला से आकर्षित होकर यह श्री केसरियानाथजी तीर्थ के इतिहास की पुस्तक आप को अर्पण कर आनन्द मानते हैं। आशा है आप इस भेट को स्वीकार कर कृतार्थ करेंगे।

आप के सेवक—
श्रीसद्गुण प्रसारक मित्रमंडल के कार्यवाहक.

इस पुस्तक की योजना में जिन ग्रन्थादि से सहायता ली गई है. उन के कर्त्तागण को धन्यवाद देते हुवे पुस्तकों की नामावली यहां लिखते हैं।

१ लेखसंग्रह बाबूसाहब पूर्णचंदजी नाहर कलकतावालों का
२ सूरीश्वर और सम्राट
३ कृपारसकोष
४ आत्मप्रबोध
५ रत्नसागर
६ मेवाड राज्य का इतिहास भाग १
७ मेवाड राज्य का इतिहास भाग २
८ राजपूताने का इतिहास
९ दिगम्बर जैन डिरेक्टरी
१० टॉड राजस्थान
११ देवकुलपाटक
१२ स्तवन संग्रह भाग १
१३ स्तवन संग्रह
१४ लावनी संग्रह
१५ भीम चौपाई
१६ केसरियाजीनो वृतान्त सभा का
१७ हस्तलिखित पत्र ४
18 The Imperial Gazetteer of India VOL. XXI 1908
19 Indian Antiquary VOL. I. 1872.
20 Times of India 1872
21 Mr. Kendy.
22 Political Agent.
23 Jainismus.
24 Mr. J. C. Brooke.
२५ कल्याणमन्दिर स्तोत्र
२६ पंच प्रतिक्रमण सूत्र
२७ पेथडशाह चरित्र
२८ बंशावली भामाशाह
२९ जीवन–विकास अने विश्वावलोकन

प्रस्तावना.

इतिहास लिखने में शिलालेख–प्रशस्ति–ताम्रपत्र एवं पत्र लेखन यही विशेष सहायक होते हैं, और इतिहास का प्रकाशन करनेवाले एसे ही प्रमाणों के सम्पादन में परिश्रम किया करते हैं। तलाश करने से जैसा साहित्य प्राप्त कर पाते हैं वैसा ही पाठकों के सामने रखते हैं, और अगर वह प्रमाणिक होता है तो जनता उस पर विश्वास करती है। इस के सिवाय प्राचीन काल से प्रचलित विधि विधान कब्जा व अमल (भुगत भोग) यह भी युक्ति पुरःसर बताये जांय तो हक्क साबित करने में सहायक होते हैं। हमने इस पुस्तक में यथाशक्ति प्रयत्न से जो साहित्य संप्राप्त हुवा उस के आधार पर बयान किया है। और इस इतिहास को १० प्रकरण में विभक्त कर जनता के सामने रखते हैं।

मन्दिर प्रकरण में मन्दिर बनवाने का समय व किस तरिके पर बनवाया गया और एसे मन्दिर किस सम्प्रदाय में बने हुवे हैं वगैराह बतलाया है सो पढने से पाठकों को पता चलेगा कि दर असल क्या बात है।

प्रतिमा प्रकरण में स्पष्टीकरण करते हमने जो लेख बताये हैं उन में सब से पुराना लेख सम्वत् १४३१ का है जो पृष्ठ ५ पर छपा है। और शिलालेखों का बयान करते श्रीयुत् ओझाजी साहब सब से पुराना लेख देवकुलिकाओं के वर्णन में सम्वत् १६११ का बताते हैं। इस के सिवाय दिगम्बर जैन डिरेक्टरी में दिगम्बर प्रतिमाओं के प्रतिष्ठा का जिकर करते सम्वत् १७३४ से पुराना और संवत् १७७६ के बाद का लेख कोई नहीं बताया गया

अतः सम्वत् १६११ का लेख जिस का जिकर श्रीमान् ओझाजी साहब करते हैं वह भी श्वेताम्बरीय पाया जाता है। इन दोनो ग्रन्थकर्त्ताने सम्वत् १४३१ वाले लेख का उल्लेख क्यों नहीं किया जिस का सबब हम नहीं बता सकते। अलबत्ता इन लेखों को बाबूसाहब पूर्णचन्दजीने निज के लेख संग्रह में प्रकाशित किये हैं। और इन्हीं दो लेखों के आधार पर The Imperial Gazetteer of India (New Editiou I908) में लिखा है जिस का बयान हम पृष्ठ ५ पर कर चुके हैं।

पादुका प्रकरण में भी जो बयान किया गया है और शिलालेख दिये गये हैं वह देखने योग्य हैं। अलबत्ता श्रीमान् सिद्धचन्द्रजी भानचन्द्रजी के चरण जो मरुदेवीजी के हाथी के समीप स्थापित हैं उन का शिलालेख जिस की नकल हम को प्राप्त न हो सकी इस लिये नहीं दी गई। और ध्वजादण्ड प्रकरण में भी पाटीयों के लेख की नकल दी गई है। इस विषय में और खोजना की जाय तो ध्वजादण्ड चढाने के प्रमाण प्राप्त हो सकते हैं किन्तु पाटी उपर जो लेख रहता है वह लब्ध होना कठिन बात है; तथापि जो कुछ प्राप्त हुवा वह पाठकों के सामने है। और पूजा प्रकरण में जहां तक हो सका स्पष्टीकरण किया है, और प्राचीन पद्धति जो जैन धर्मानुसार अब तक चली आती है उस का उल्लेख है। जिस को पढने से व विधि–विधान इत्यादि पर लक्ष देने से मालूम होगा कि प्रचलित प्रथा व इस विषय के प्रमाण क्या बता रहे हैं? इस के बाद परवाना प्रकरण को तो पूरा लिखा जाय तो

एक अच्छी बडी पुस्तक बन सकती हैं, लेकिन हमने उपयोगी परवानो में से कुछ नकलें पाठकों के सामने रक्खी है, जिन को देखने से मालूम हो जायगा कि मेवाड राज्य की कृपा जैनियों पर किस प्रकार रहती आई है। और परवानों के सिवाय हुक्म एहकाम तो कइ मरतबा एसे एसे जारी हुवे हैं जैसे आज होना असंभव है।

आपत्तिकाल गुणानुवाद प्रकरण में भी जो सम्पादन हो सका उस का बयान किया गया है, और गुणानुवाद प्रकरणमें हमने ज्यादे खोज नहीं की क्यों कि लावनीयां, स्तवन, छन्द आदि इस तीर्थ के बहुत बने हुवे हैं और हम को हमारे संग्रह में से जो ठीक मालूम हुवा उन को गुणानुवाद में प्रकाशित किये हैं। और मेवाड राज्य और जैन समाज नाम का लेख जो अवश्य पढने लायक है। इस को पूरा लिखा जाय तो एक पुस्तक बन सकती है। अतः कुछ नमुने के तौर जो बयान पाठकों के सामने रखा है उसे अवलोकन करना चाहिये। इस तरह यह एक छोटी सी पुस्तक तैयार कर जनता के सामने रखी जाती है। जिस के प्रकाशन में किसी प्रकार की क्षति हो या प्रूफ संशोधन में द्रष्टिदोष के कारण अशुद्धियां रह गई हों उन के लिये पाठक क्षमा कर–सुधार कर पढें और विशेष हम क्या कहें ?

सम्वत् १९९० ज्येष्ठ शुक्ला १०
शनिवार.
मु. पालीताना (काठीयावाड).

समाजसेवक—
चंदनमल नागोरी.
छोटी सादडी (मेवाड).

दूसरी आवृत्ति की प्रस्तावना.

श्रीकेसरियाजी तीर्थ का इतिहास जिस की प्रथमावृत्ति प्रकाशित होते ही लगभग तीन सौ पुस्तकें तो भेट भेजी गई, और पांच सौ पुस्तकें ग्राहकोंद्वारा बिक चुकी इस लिये करीब एक महिने बाद ही इस इतिहास की दूसरी आवृत्ति का प्रकाशन कराने की आवश्यकता पाई गई। यह पुस्तक किस्सा, कहानी व रसिक वार्ता वाञ्छन को पोषण करनेवाली तो है नही। इस में तो केवल इस तीर्थ के प्राचीन–अर्वाचीन प्रमाणो का संग्रह-मात्र है। न तो कोई कल्पनायुक्त उल्लेख है और न अतिशयोक्ति है। केवल वास्तविक प्रमाण जो सम्प्राप्त हुवे हैं उन्ही के आधार पर लिखा गया, है और इसी कारण जैन जनताने इस का ठीक सत्कार किया हो ऐसा अनुमान होता है।

इस पुस्तक की प्रथमावृत्ति प्रकाशित होने बाद हमें भामाशाह की वंशावली का पता लगा जिस में तीर्थ केसरि-याजी में ध्वजादण्ड चढाने व जिर्णोद्धार कराने का उल्लेख है। और सम्भव है क्यों कि भामाशाह की राजसेवा, संघसेवा, और ज्ञातिसेवा प्रशंसनीय थी। और ७४।। शाह का वर्णन यह भी वंशावली लिखनेवालों के पास बहीयों में लिखा है, जिस की नकल हमारे पास है उस से भी पता चलता है कि भामाशाहने तीर्थयात्रा कर लेण दी और उन के जीवन में ध्वजादण्ड चढाने का भी बयान आता है। जिस की नकल हम यहां लिखते हैं।

सम्वत् १६४३ महा सुदी १३ शाह भामाजी केन धुलेवरा श्री ऋषभदैवजी महाराज के मन्दिर को जिर्णोद्धार करापितं डंडप्रतिष्ठा कराई पछे यात्रा सम्वत् १६५२ रा वर्ष सुं लगाय सम्वत् १६९३ वर्ष सुदी माघ शुक्ला १५ तिथी शाह भामाजी सब देश री यात्रा कीधी याने लेण बांटी ६९००००० गुणसठ लाख खर्च कीधा पुन्य अर्थ मेदपाट, मारवाड, मालवो, मेवात, आगरा, अहमदाबाद, पाटण, खम्भाइत, गुजरात, काठियावाड, दिखण वगैरा सर्व देशे लेण बांटी मोर १ नाम.....संग हस्ते दत्त्वा बामणाने जीव धर्म वराव्या जाचकांने प्रबल दान दीधां भोजक पोखरणा पोलवाल ने जगनहजीने मोहरां ५०० वटवो, मोत्यांरी माला १ घोड ५०० सर्व करी एक लक्ष मुका दान दे अजाचकता कुलगुरांने जाये परणे मोहर २ चवरी री लाग कर दीधी पोसालरा भट्टारषजी श्रीनरबद राजेन्द्रसूरिजीने सोनेरी सूत्र वेराव्या मोत्यांरी माला १ कडा जोडी १ डोरो १ गछ पेरामणी इं मुजब दीधी। वगैरा।

उपर्युक्त लेख से पता चलता है कि भामाशाहने विक्रम सम्वत् १६४३ में नगर धुलेव के श्रीकेसरियानाथजी महाराज के मन्दिर पर ध्वजादंड चढाया जिस का प्रमाण वंशावली से मिलता है। वंशावली लिखनेवाले निज की बहीयों में उत्तम कार्यों का वर्णन लिखते हैं और यह पृथा अबतक प्रचलित है। भामाशाह वीरप्रतापी महाराणाधिराज प्रतापसिंहजी के समकालीन थे और बादशाह से पट्टा लिखाया जिस

का अनुमोदन महाराणाधिराजने सम्वत् १६३५ में किया और परवाना भेजा उस के कुछ साल बाद ही ध्वजादण्ड चढाने भामाशाह यहां आये हों तो यह मानने योग्य है। तीर्थप्रेम और भक्तिवश आये तो होंगे लेकिन ध्वजादण्डारोहण के बयान से यहां सम्बन्ध है। जिस के लिये वंशावली के सिवाय और कोई प्रमाण इस उल्लेख का हमारे देखने में नही आया। अतः जैसा देखा वैसा ही पाठकों के सामने रखते हैं। भामाशाह आदि का बयान करते " जीवन-विकास अने विश्वावलोकन " नाम के गुजराती पुस्तक में पृष्ठ ३०८ पर बयान है जिस का मतलब यह है कि—

मेवाड राज्य में आशाशाह और भामाशाह की अद्भुत मदद को अलग रखते देखते हैं तो धार्मिक असर भी बहुत है। पर्युषण में अमारी पडह का बजना..... .....केसरियाजी तीर्थ के लिये असाधारण भक्ति.....वगैरह जैनधर्म की पूर्ण असर के अवशेष हैं इत्यादि। जो कुछ प्राप्त हुवा पाठकों के सामने है, और विशेष परिवर्तन तो दूसरी आवृत्ति में नही है। आशा है जनता इस का ठीक सत्कार करेगी. इत्यलम्।

१९९० अषाड सुदि १०
पालीताणा (सौराष्ट्र)

भवदीय—
चंदनमल नागोरी
छोटीसादडी (मेवाड)

जैन समाज से निवेदन.

जैन साहित्य–संसार में एक ऐतिहासिक पुस्तक की वृद्धि हुई है. जिस का प्रकाशित करना विद्वान इतिहासवेत्ताओं का काम था तथापि मेरे जैसा सामान्य व्यक्ति एसे कार्य को हाथ में लेकर पुस्तक प्रकाशन कराने का साहस करे तो जिस में कइ प्रकार की त्रुटियां रहजाना सम्भव है; क्यों कि पुस्तक प्रकाशन का कार्य मामूली बात नहीं है। इसी कारण से इस पुस्तक में भाषासौंदर्य, लालित्य वाचन और शृंखलाबद्ध लेख का तो अभाव ही है। लेकिन उद्देश मात्र इतना ही है कि श्रीकेसरियानाथजी महाराज के तीर्थ का वास्तविक वृत्तान्त जनता के जानने में आवे और जैन समाज नये झगडे–टंटो से बचे।

हम इस इतिहास को प्रकाशित करा यह नहीं चाहते कि जैन श्वेताम्बर समाज के ही हक साबित होने के कारण पूजन-वन्दन के अधिकारी अन्य कोई नहीं हो सकते। न तो हमें इस विचार के हैं और न हमें इस तरह का पक्षपात है। हम तो यही चाहते हैं कि जिनप्रतिमा जिनमन्दिर के नाम से झगडे किये जांय, लडाइयां लडी जाय यह सर्वथा अनिच्छनीय है। जैन समाज व्यापारी व बुद्धिशाळी नरवीर प्राकर्मी पुरुषों की खानदान से पेदायश है, और एसी चतुर–कार्यकुशल समाज झगडे–टंटो में अपना पुष्कल धन खर्च कर हंसी के पात्र बने इस को बुद्धिमान लोग वेदते नहीं हैं; किन्तु निन्दात्मक दृष्टि से देखते हैं। खैर जिस का अंतिम परिणाम यही निकलता है कि दो के लडने से तीसरे को लाभ। जैन समाज की कमाई का गहरा धन तीर्थों की मुकद्दमेबाजी में चला गया और नतीजा कुछ भी नहीं।

सारा समाज की स्थिति निर्भाल्य हो गई, कइ कुटुम्ब रंक अवस्था में आ गये, व्यापार का भी अन्त आगया और लोग वीर्यहीन हो गये, करामात–चमस्कार का अभाव हो गया और आपसी टंटे–झगडों से प्राचीन ख्याति व प्रभूता का भी नाश कर बैठे, और कइ श्रीमंत श्रद्धा-हीन बन चुके और सरकारी अमलदारशाहीने भी मुंह फेर कर पुरानी मर्यादा को छोडदी। इत्यादि तरह से जहां देखो वहां क्लेशमय संसार, दुःख दारिद्र का रोना–पीटना और सुबह की शाम होंना कठिन, एसी अवस्था में मुकद्दमेबाजी में धन बरबाद करना सम्पूर्ण धृष्टता है। अत-एव हम तो बारबार यही प्रार्थना करेंगे कि अब समाज को संभल जाना चाहिये, अब वख्त सोने का नहीं है।

जमाने के हेरफेर को देखते इस समय इस पुस्तक को प्रकाशित कराने की आवश्यक्ता नहीं थी लेकिन वास्तविक इतिहास जानने में आवे और नये बखेडे पैदा न हों या पैदा हों तो उन को हटाने का मार्ग सुगम हो जाने के हेतु से ही इस पुस्तक का प्रकाशन आवश्य-कीय समझा गया है।

इस पुस्तक का साहित्य संग्रह करने में श्रीमान् माणकसागरजी महाराजने बहुत सहायता प्रदान की है एतदर्थ महाराजश्री का अंतः-करण से उपकार मानता हुँ, और जिन महानुभावोंने चित्र–शिलालेख आदि प्राप्ती में व प्रश्नोत्तर में अपना समय दिया है उन को धन्यवाद है।

पाठक ! पुस्तक के वांचन में त्रुटियों के लिये क्षमा कर इस के असल भाव को ग्रहण करें यही लेखक की प्रार्थना है। किं बहुना—

भवदीय—

चंदनमल नागोरी.

अनुक्रमणिका.

नाम.	पृष्ठ.	नाम.	पृष्ठ.
१ श्री केसरियानाथजी	१	६ पूजा प्रकरण	४४
२ मन्दिर प्रकरण	४	७ परवाना प्रकरण	५६
३ प्रतिमा प्रकरण	२१	८ आपत्तिकाल	७२
४ पगल्या प्रकरण	३१	९ गुणानुवाद प्रकरण	८०
५ ध्वजदण्डारोहण प्रकरण	३८	१० मेवाड राज्य और जैन समाज	१००

चित्रसूची.

नाम.	पृष्ठ.	नाम.	पृष्ठ.
१ योगीराज महात्मा शांतिविजयजी महाराज		६ ,, ,, ,,	४२
२ धुलेव के मन्दिर का द्रष्य	४	७ आचार्यवर्य्य श्री सागरानन्द सूरिजी महाराज	४३
३ श्री केसरियानाथजी महाराज	२१	८ स्वर्गवासी महाराणाधिराज	५१
४ ध्वजादण्ड चढाने का द्रष्य	३८	९ वर्तमान महाराणाधिराज	७१
५ ,, ,, ,,	४१		

नीचे लिखे पुस्तक हमारे यहां से मंगाइयें.

कीमत	नाम.
१-०-०	पूजासंग्रह जिस में श्रीमान् विजयानन्दसूरिजी व विजयवल्लभसूरिजीकृत पूजाओं का संग्रह है
०-८-०	श्रावक प्रज्ञप्ति
०-६-०	आत्मावबोध कुलक
०-२-०	स्तवन संग्रह
०-१०-०	वस्त्रवर्णसिद्धि
०-२-०	चतुररंभा और कामी भरथार
०-२-०	दुःखौषधी दुःख
०-१०-०	प्राचीन जैन लेख संग्रह
४-०-०	तत्त्वनिर्णयप्रसाद (पुराना)
०-१२-०	सम्यक्त्व शल्योद्धार
०-२-०	जेसलमेरमां चमत्कार
१-८-०	कल्पसूत्र मूल व हिन्दी अनुवाद
०-८-०	सुखचरित्र
०-१२-०	केसरियाजी तीर्थ का इतिहास
०-४-०	वार्तावृत्त
०-२-०	सुदर्शन

कीमत	नाम.
०-२-०	श्रीकेसरियाजी का फोटू
०-२-०	महावीर भगवान का फोटू
०-२-०	गौतमस्वामी का फोटू
०-२-०	स्वर्गवासी महाराणाधिराज फतेहसिंहजी साहब का फोटू
०-२-०	महाराणाधिराज भोपालसिंहजी साहब का फोटू
०-१-०	मेवाड के नवयुवको को संदेश.
भेट	प्रतिमा छत्तीसी
,,	बारावृत
,,	दूसरी कोन्फरन्स के भाषण

अब प्रकाशित होनेवाली पुस्तकें

१ मेवाड के सात तीर्थोंका इतिहास सचित्र जिसमें पन्द्रह फोटू होंगे
२ गृहस्थधर्म
३ मस्तिष्कज्ञान निबन्ध
४ जैनसूत्र निबन्ध
५ नवकारकल्प
६ उवसग्गहरकल्प
७ लोगस्सकल्प

उपर लिखे पुस्तकों में से व फोटू जो दो आने की कीमत के हैं प्रभावना के लिये मंगवानेवालों को २५ टका कमीशन दिया जायगा। पोष्ट खर्च अलग है।

श्रीसद्गुरु प्रसारक मित्रमंडल.
पो० छोटीसादडी (मेवाड)

श्री केसरियानाथजी.

श्री केसरियानाथजी।

जैन श्वेताम्बर तीर्थ श्री केसरियानाथजी मेवाड देशान्तरगत उदयपुर राजधानी के निकटवृत्ति मगरा नामी जिले में शहर उदयपुर से ४० चालीस माइल के फासले पर धुलेव नामी गांव में वाके है।

इम्पीरीयल गेझेटीयर ऑफ इन्डियां पुस्तक २९ सन् १९०८ की नवीन आवृत्ति पृष्ठ १६८–१६९ पर छपने मुवाफिक यह तीर्थ–राजपुताना उदयपुर ष्टेट में मगरा जिले में एक किल्लेबन्ध परकोटे के अन्दर (धुलेव) गांव में है और पहाड पर्वतों के बीच में २४ ० ५, N और ७३–४२' E इस दिशा में याने उदयपुर से दक्षिण दिशा में ४० चालीस

माइल की दूरी पर खेरवाडा छावनी से इशान कूण में लग-भग दस माइल के फासले पर है।

धुलेव गांव में एक बहुत अच्छा–सुन्दर नकसी–कोरणी के कामवाला जैन मन्दिर है। जिस में मूलनायक जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेवजी महाराज की प्रतिमा जिन को श्री आदिनाथ भगवान भी कहते हैं। इस मन्दिर में प्रतिमाजी स्थापित हैं, और मुख्य मूर्त्ति जो निज मन्दिर में श्याम पाषाण की लगभग तीन फूट उंची पद्मासन स्थिति में बिराज-मान है। और आसपास भी बावन जिनालय के नामवाली कोठरियां बनी हुई हैं, जिन में भी जैन श्वेताम्बर मूर्त्तियां स्थापित हैं। इस तीर्थ में जैन यात्री बहुतायत से आया करते हैं। और प्रतिमाजी अति प्राचीन अत्यन्त मनोहर–चमत्कारी होने के कारण भक्तजन अत्यन्त भावपूर्वक पूजन करते हैं और हजांराह तोला केशर एक साथ भी चढा देते हैं। यहां पर केशर पुष्प चढाने के अतिरिक्त चांदी की सोने की व झवेरात की आंगीयां मुकुट कुण्डल धारण कराये जाते है। यहां पर यात्रा के लिये आनेवाले भक्तजन केसर बहुतायत से चढाते हैं इस लिये यह तीर्थ श्री केसरियाजी के नाम से प्रसिद्ध हो रहा है और इसी नाम से पहिचाना जाता है।

इस तीर्थ की प्राचीनता के लिये दो बातें सौचने की है। प्रथम तो मन्दिर की प्राचीनता और दूसरे प्रतिमाजी की प्राची-

नता। दोनो बातों पर सौचते हैं तो मन्दिर तो चौदहवीं सदी से ज्यादे पुराना मालूम नहीं होता, और शिलालेख आदि से भी चौदहवीं सदी के लगभग बना हो एसा निश्चय होता है। और प्रतिमाजी के लिये यह सिद्ध नही हो सकता कि कौन सी सदी के हैं। प्रतिमाजी की प्राचीनता के लिये हम प्रतिमा प्रकरण में कुछ बयान करेंगे। लेकिन सब से पहले मन्दिर की प्राचीनता के बाबत उल्लेख करना चाहते हैं सो पाठक ध्यान देकर पढें।

मन्दिर प्रकरण.

श्री केसरियानाथजी के मन्दिर की प्राचीनता के विषय में इम्पीरीयल गेझेटीयर ऑफ इन्डिया पुस्तक २१ सन् १९०८ की नई आवृत्ति में पृष्ठ १६८–१६९ पर बयान है कि–" यह भगवान आदिनाथ अथवा ऋषभदेव का प्रख्यात जैन मन्दिर है, जहां गुजरात और राजपूताना के प्रत्येक प्रान्त में से असंख्य हजारांह यात्री यात्रा को जाते हैं। यह मन्दिर कितने वर्ष पहले का बना हुआ है यह निर्णय करना मुश्किल है। किन्तु तीन शिलालेखों पर से मालूम होता है कि चौदहवीं या पन्दरहवीं सदी में इस मन्दिर का जिर्णोद्धार हुवा हो एसा पाया जाता है। जिस की इंगलिश नकल देखिये.

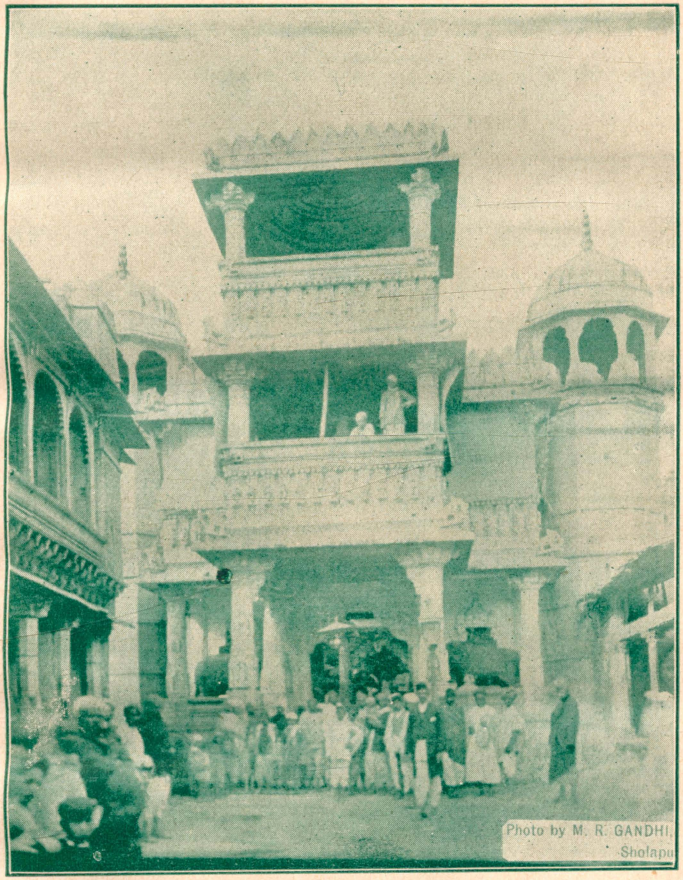

श्री केसरियानाथजी के मंदिर का बहार का दृश्य.

आनंद प्रेस—भावनगर. "जैन विजय" के सौजन्य से प्राप्त

Extract From The Imperial Gazetteer of India.

VOL XXI (New Edition 1908)

Pages 168-169

The famous Jain temple sacred to Adinath or Rakhabnath, is annually visited by thousands of pilgrims from all parts of Rajputanas & Gujarat. It is difficult to determine the age of this building, but three inscriptions mention that it was repaired in the fourteenth and fifteenth centuries.

Indian Antiquary. Vol. I.

इस लेख पर से ज्ञात होता है कि तीन शिलालेख जिन के आधार पर इम्पीरीयल गेझेटीयर में लिखा गया है यह मन्दिर चौहदवीं सदी के आसपास का बना हुआ प्रतीत होता है। देखिये शिलालेख की नकल।

श्री कायासवास वासीता केवलावदाग नमो ज्ञमाग्रत (?) आदिनाथ प्रणामामि—विक्रमादित्य संवत १४३१ वर्षे वैशाख सुदि अक्षय तिथौ बुध दिने चादीना धुराल....।

उपर का लेख विक्रम सम्वत् १४३१ का है। इस के बाद दूसरा लेख देखियेगा।

श्री आदिनाथ प्रणमामि नित्यं विक्रमादित्य संवत १५७२ वैशाख सुदि ५ वार सोमवार श्री जशकराज श्री कला भार्या सोवनबाई चीजीराज यहां धुलेवा ग्राम श्री ऋषभनाथ प्रणम्य कडीआ फोइ आ भार्या भरमी तस्या पवेई सा. भार्या हासलदे तस्य पगकारादेव रार गाय भ्रात वेणीदास भार्या लास्टी चाचा भार्या लीसा सकलनाथ नरपाल श्री काष्ठा संघ—श्री ऋषभनाथजी श्री नाभिराज कुष श्रीतां–रीकुल—।

दोनों लेखों से पता चलता है कि इस मन्दिर का काम चौदहवीं सदी में बना है, और बाद में जिर्णोद्धार होता रहा हो इस के सिवाय इस मन्दिर का मध्यभाग विक्रम सम्वत् १६८९ में सम्पूर्ण होने का प्रमाण मिलता है। क्यों कि शीखर के उपर दो कारीगरोंने मन्दिर का काम सम्पूर्ण करते समय निज की मूर्त्तियां चित्रकर सूत्रधार की जगह खुद का नाम लिखा है, जिन में से एक का नाम "भगवान" दूसरे का नाम "लाधा" और नाम के नीचे सम्वत् १६८९ भादवा विद ९ सोमवार लिखा है। इस लिये इस लेख पर से यह सिद्ध होता है कि शीखर का काम सम्वत् १६८९ में सम्पूर्ण हुवा हो। शिलालेख से तो धी इम्पीरीयल गेझेटीयर में लिखे मुवाफिक चौदहवीं या पन्द्रहवीं सदी में बना हो या जारी किया हो और वह अनुकूलतापूर्वक सम्वत् १६८९ तक चलता रहा हो एसा अनुमान होता है।

मन्दिर की तामीर का ढंग देखते पाया जाता है कि मन्दिर

बनवाये बाद मन्दिर के आसपास धर्मशाळा के मकानात बनवाये हों। क्यों कि हाल में बावन जिनालय हैं उन देवरियों को देखते पाया जाता है कि देवरी आकार से उन की तामीर नही कराई गई, क्यों कि उन के उपर उस समय का बनवाया हुवा गुम्मज मालूम नही होता, और बावन जिनालय की लाइन में सामान रखने के लिये और भण्डार के नाम से जो कोठरियां हाल में मौजूद हैं इसी मुवाफिक चारों तर्फ हो ऐसा अनुमान होता है। और इस समय भी भण्डार के नाम से पहिचानी जाती हैं। उन कोठरियों पर गुम्मज नही है और बावन जिनालय पर भी शीखरनुमा या गुम्मज का कोई चिन्ह नजर नही आता। लेकिन गुम्मज की जगह गोलाकार टेकरी सी बनी हुई मौजूद है, जिन के उपर न तो कलश है न ध्वजादण्ड है। इस लिये पाया जाता है कि धर्मशाळा के लिये जो मकानात थे उन को समय आये इस कार्य में ले लिये होंगे। और इन बावन जिनालयों की लाइन में मन्दिर में खडे रहते दाहिने व बांये हाथ और मन्दिर के पीछे के भाग में जो बडे मन्दिर बने हुवे हैं उन को ठीक तरह देखने पर मालूम होता है कि इन के बनवाने का समय भी दूसरा है, क्यों कि छज्जा व चानणी जिसे आगासी भी कहते हैं। बावन जिनालय की लाइन में मिलते हुवे नही हैं। अलबत्ता पृष्ट भाग में जो मन्दिर बना हुवा है उस का आगे का भाग बावन जिनालय की लाइन में लिया गया है। इन सूरतों पर विचार करते पाया जाता है कि इन के बनवाने का समय दूसरा ही है।

इन बावन जिनालय में प्रतिमाजी स्थापित करने का समय सम्वत् १७४६ पाया जाता है, क्यों कि श्रीमान् विजय-सागरजी महाराजने प्रतिष्ठा कराई है जिस के शिलालेख भी मौजूद हैं। इस लिये सिद्ध होता है कि बावन जिनालय की प्रतिष्ठा का समय सम्वत् १७४६ है। और इस को ध्यान में रखकर सौचते हैं तो इन के बनवाने का समय सम्वत् १७०० के लगभग का होना चाहिये। क्यों कि शीखर के हिस्से में सिलावटोंने खुद की मूर्ति चित्रकर उस के नीचे सम्वत् १६८५ लिखा है। तो सम्भव है कि शीखर का काम सम्पूर्ण होने बाद पन्द्रह साल के फासले पर ही बावन जिना-लय की योजना हुई हो। इस के सिवाय एक और बात ध्यान में लेने योग्य है कि इन बावन जिनालय की कोठरियों में धर्मशाला होने के समय अन्दर आने का रास्ता वड के वृक्ष की तर्फ से हो ऐसा दिखता है, क्यों कि सामने खडे हो कर देखें तो एक चबुतरे का निशान दिखता है। और उसी तर्फ जो दरवाजे का निशान है उस मार्ग से श्रीमान् हिन्दूकूलसूर्य महाराणा साहिब के पधारने का रिवाज था। जो अब तक चला आता है।

पिछले रास्ते के लिये किसी का ऐसा मत है कि मन्दिर का खास दरवाजा जो कि पूर्वदिशा की तर्फ है, उस के उपर के भाग में एक मस्तक और पांच शरीर के चिन्ह है और वह अशुभ माना गया है। इस लिये श्रीमान् महाराणाधिराज इस मार्ग से नहीं पधारते थे। लेकिन यह कथन तो कल्पनामात्र

है क्यों कि अव्वल तो इस कथन की सत्यता का कोई प्रमाण सम्पादन नहीं है। दोयम अशुभसूचक चिन्ह देशी-राज्य में रहनेवाला ही बनवावे। तो उस जमाने में कितनी भयंकर घटना थी जिस का अन्दाज देशीराज्य में रहनेवाली प्रजा से छिपा हुवा नहीं है। इस के सिवाय ऐसे ही चिन्ह राणकपूर, आबू आदि जैन तीर्थों में भी बने हुवे हैं।

उपर के कथन से इस मन्दिर का मध्य भाग शिखर आदि विक्रम सम्वत् १६८९ में और बावन जिनालय की प्रतिष्ठा सम्वत् १७४६ में होने के लेख मिलते हैं। इस लिये यह सिद्ध होता है कि यह मन्दिर सात सौ वर्ष पहले का बना हुवा तो नही है। इस के अलावा सम्वत् १७०२ में आंगी का आरोप जारी होना दिगम्बर भट्टारकजी महाराज क्षेमकीर्त्तिजीने फरमाया है, जिस का विवरण दिगम्बर भाइयों की छपवाई हुई डिरेक्टरी में है। तो सम्भव है कि मन्दिर का मध्यमभाग सम्वत् १६८९ में सम्पूर्ण होने के बाद याने पन्द्रह सोलह साल के बाद ही भट्टारकजी महाराज इस तर्फ पधारे हों और यह कथन प्रतिपादित किया हो। इस तरह मन्दिर बनवाने का समय और कौन सा हिस्सा पहले व पीछे बनवाया गया इस का विचार करने बाद आगे देखते हैं तो एक और विशेष प्रमाण मिलता है। और वह यह है कि मन्दिर के सामने जो नौ चौकी बनी हुई है। उस की प्रशस्ति का लेख जैन श्वेताम्बरीय मन्दिर होने का प्रमाण बतलाता है। यह नौ चौकी श्वेताम्बरा-

चार्य श्रीमान् जिनलाभसूरिजी के उपदेश से बनवाई है एसा शिलालेख से साबित होता है। यह लेख निज मन्दिर के दाहिनी तर्फ गोख के उपर अङ्कित है जिस की नकल इस प्रकार है।

" संवत १८४३ वै० शु० १५ पूर्णिमा तिथी रविवासरे बृहत्खरतरगच्छे श्रीजिनभक्तिसूरि पट्टालंकारे भट्टारक श्री१०९ श्रीजिनलाभसूरिभिः। – – श्रीरामविजयादी प्रमुखे सहूक-आदेशात् सनीपुर–श्रीऋषभदेवजी "

उपर के लेखवाली नौ चौकी के लिये इतिहासवेत्ता श्रीमान् गौरीशङ्करजी हीराचंदजी ओझाने निज के बनाये हुवे राजपूताने के इतिहास में पृष्ठ ३४९ पर बयान किया है कि—

" यहां से तीन सीढियां चढने पर एक मंडप आता हैं जिस को नव स्तंभ होने के कारण नौ चौकी कहते हैं, यहां से तीसरे द्वार में प्रवेश किया जाता है।

उपर की हकीकत लिखते हुवे श्रीमान् ओझाजी साहब विस्मरण हो गये हों एसा पाया जाता है, क्यों कि चौकी शब्द का अर्थ स्थम्भ नही बनता और यह शब्द सरल व परिचित है। तथापि चर्चात्मक स्थान में पहुंच कर निज के देखने बाद भी चौकी शब्द का अर्थ स्थम्भ कैसे लिखा है समझ में नहीं आता। इन का कथन प्रमाणिक व सत्य हकी-

कतवाला माना जाता है, तथापि इस विषय में तो द्रष्टिदोष अवश्य है ।

पाठक ! इस स्थान पर जा कर देखें तो पता लगता है कि इन नौ चौकी पर बारह स्थम्भ तो खुले दिखते हैं, और चार स्थम्भ दीवार के सहारे के हैं । इन सोलह स्थम्भों के बीच में नौ चौकी का स्थान मौजूद है । जो जैन श्वेताम्बराचार्य के उपदेश से गोख के उपर की दीवार में लगे हुवे शिलालेख से साबित होता है ।

नौ चौकी बाबत श्रीमान् ओझाजी साहबने ऐसा ही बयान तीन नौ चौकी जो राजसमुद्र की पाल उपर बनी हुई है, उन का विवरण लिखते " राजपूताने के इतिहास " में किया है जिस को हम द्रष्टिदोष मानते हैं । लेकिन श्वेताम्बर समाज के आचार्यमहाराज के उपदेश से नौ चौकी बनवाई गई जिस का उल्लेख राजपूताने के इतिहास में नहीं है । इस के लिये श्रीमान् ओझाजी साहब यह कह देंगे कि उस समय प्रशस्ति नहीं थी तो हम इस का स्पष्टीकरण करेंगे कि श्रीमान् बाबूसाहब पूर्णचन्द्रजी नाहर कलकत्तानिवासीने सम्वत् १९७१ में शिलालेख संग्रह कर पुस्तकरूप में सम्वत् १९७४ में प्रकाशित कराये हैं । और एक पुस्तक उसी अरसे में आप के पास भी पहुंचाई है उस में नम्बर ६३८ वाला लेख देख लिया होता तो आपने राजपूताने का इतिहास जो सम्वत्

१९८३ में प्रकाशित कराया है उस में इस विषय का उल्लेख अवश्य किया होता।

श्रीमान् बाबूसाहब के लेख संग्रह में लेख नम्बर ६३८ में सम्वत् १४४३ छप गया है, लेकिन शिलालेख में सम्वत् १८४३ है। जा प्रुफ संशोधन में द्रष्टिदोष से १४४३ छप गया है। हम इतना जरुर कहेंगे कि यही लेख सम्वत् १४४३ का मान लिया जाय तो और ज्यादे प्राचीनता सिद्ध होती है, लेकिन इतिहास मना करता है, क्यों कि इस लेख में श्रीमान् जिनभक्तिसूरिजी व श्रीमान् जिनलाभसूरिजी नाम के श्वेताम्बराचार्यों का बयान है, और यह पन्द्रहवीं सदी में नहीं हुवे। इन के लिये तो उन्नीसवीं सदी में होने के प्रमाण मिलते हैं। देखिये बाबूसाहब के लेख संग्रह प्रथम विभाग में लेख नम्बर ३०२ व लेख नम्बर ३०३ और ६००

"सं. १८२० वर्षे मिः मि. सु. ३ श्री भ. जिनलाभसूरि....(३०१)"

"सं १८२० वर्षे मिः मा. सु. ५ श्री भ. जिनलाभसूरि प्र० धीरगोत्रे श्रे० मोतीचंदकारी....जिनः.....। (३०३)"

"सं. १८२१ मि. वै. सुदी ३ श्री पार्श्वजिन भ० श्री जिनलाभसू० यति हीरानंद करापितं....। (६००)"

उपर के शिलालेखों से पत्ता चलता है कि श्रीमान् जिन-

लाभसूरिजी महाराज का १८२० में मौजूद होना पाया जाता है। इसी तरह लेख नम्बर ३ व ५ के देखने से श्री जिनभक्ति-सूरिजी के प्रशिष्य अमृतधर्म वाच्चनाचार्य की कराई हुई प्रतिष्ठा का पता चलता है। और "रत्नसागर" नाम की पुस्तक में पृष्ठ १८० पर श्रीमान् जिनलाभसूरिजी के शिष्य क्षमाकल्याण-कजी महाराजने सम्वत् १८२७ में शीतलनाथ भगवान का स्तवन सुरत बंदर में प्रतिष्ठा के समय बनाया वह प्रकाशित हुवा है। इस के सिवाय भट्टारकजी श्री जिनलाभसूरिजीने सम्वत् १८३३ में "आत्मप्रबोध" नाम का ग्रन्थ संस्कृत में बनाया, और उस का भाषान्तर सम्वत् १९६७ में जबलपुर-निवासीने प्रकाशित कराया है। इस ग्रन्थ के पृष्ठ ३९६ पर लिखा है कि यह आत्मप्रबोध ग्रन्थ श्री जिनभक्तिसूरिजी के श्री जिनलाभसूरिजी हुवे उन्होंने सम्वत् १८३३ कार्तिक वदि पञ्चमी के दिन इस ग्रन्थ को सम्पूर्ण किया।

इन तमाम हालत को देखते पाया जाता है कि नौ चौकी-वाले लेख में श्री जिनलाभसूरिजी महाराज का नाम हैं वह उन्नीसवीं सदी में हुवे हैं और उन्हीं के उपदेश से नौ चौकी मण्डप बना है जो श्वेताम्बरीय आचार्य थे।

उपर के कथन से भली भांति समझ में आ गया होगा कि मन्दिर के उपर का शिखर तो सम्वत् १६८९ में और बावन जिनालय के तीनों बडे मन्दिर आदि की प्रतिष्ठा सम्वत्

१७४६ में व नौ चौकी के मण्डप की तामीर सम्वत् १८४३ में होने के शिलालेख प्राप्त हैं। अब बाहर के भाग का विचार करना चाहिये।

बाहर आकर देखते हैं तो श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ भगवान का मन्दिर बना हुवा है, जिस की प्रतिष्ठा श्रीमान् सुमतिचन्द्रजीने सम्वत् १८०१ में कराई है। जिस का शिलालेख तत्स्थान में मौजूद है, जिस की नकल देखिये।

॥ ॐ ॥ प्रणम्य परया भक्त्या पद्मावत्याः पदाम्बुजं। प्रशस्ति लिख्यते पुण्या कविकेशर कीर्त्तिना ॥ १ ॥ श्री अश्वसेन कुल पुष्पक रथश्चभानुः। वामांग मानस विकासन राजहंसः ॥ श्री पार्श्वनाथ पुरुषोत्तम एष भाति। धुलेव मंडनकरा करुणा समुद्रः ॥ २ ॥ श्रीमज्जगत्सिंह महीश राज्ये। प्राज्यो गुणैर्जात ईहालथोयं ॥ आपुष्पदत्त स्थिरतामुपैतु। सं पश्यतां सर्व सुखप्रदाता ॥ ३ ॥

दोहा।

सुर मन्दिरकारक सुखद, सुमतिचंद्र महासाधः।
तपे गच्छ में तप जप तणो, उपत उदधि अगाधः ॥ ४ ॥

पुन्य थाने श्री पार्श्वनो, पुहवी परगट कीध।
खेमतणो मनषा तिसु, लाहो भव नो लीध ॥ ५ ॥

राजमान मुहता रतन, चातुर लषमीचंद।
उच्छव किधा अति घणां, आणी मन आनन्द ॥ ६ ॥

दिल सुध गोकलदासरे, कीध प्रतिष्ठा पास ।
सारे ही प्रगटयो सही, जगति में जस वास ॥ ७ ॥

सकल संघ हरषित हुओ, निरमल रवि जिन नाम ।
राषो मुनि महंत सरस करता पुण्य सकाम ॥ ८ ॥

कवित । सांतिदास, सचित संत दावडा लषमीचंदहः ।
संघ मनुष्य सिरदार सहस किरण सुष के कंदहः ॥
वल्लभ दोसी वीर धोर, जिन धर्म धुरंधरः ।
मुलचंद गुण मूलहीर धाया उर गुणहरः ॥
सकल संघ सानिधकरः सुमतिचंद महासाधः ।
पास सदन कियो प्रगट, निश्चल रहो निरबाधः ॥ ९ ॥

श्लोकः—

तद्वारेक पूज्यकृद कृपाख्यो देवेर प्रविलग्नः विचित्रः
पूजाव तेस्मै प्रवित्तं लितावै संघेन सत्सौम्य गुणान्वितेन ।१०

गजधर सकल सुज्ञान, धराहरी कीधो गुण हेर ।
रच्यो बिबं जिनराजको करुणावंत कुबेर ॥ ११ ॥

आर्या । शशीव सुख राज वर्षे । माधवमासे वलक्ष पक्षे च ।
पंचम्यां भृगुवारे हि कृता प्रतिष्ठा जिनेशस्य ॥ १२ ॥

महागिरि महासूर्य, शशिशेष शिवादयः ।
जगवल्लभ पार्श्वस्य तावतिच्छतु विवकं । ॥ १३ ॥

श्री संवत् १८०१ शाके १६६६ प्रमिति वैशाख सुदि ५ शुक्रवासरे श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ बिबं प्रतिष्ठिं बृहत्तपागच्छीय सुमतिचन्द्रगणिना कारापितं ॥ श्रीरस्तु ॥ शुभं भवतु ॥

उपर के लेख से विदित होता है कि श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ भगवान के मन्दिर की प्रतिष्ठा सम्वत् १८०१ में श्री सुमतिचन्द्रजी गणीने कराई है। इस मन्दिर को देखे बाद मन्दिर के किल्ले की दीवार पर ध्यान पहुंच जाता हैं। जिस के लिये हमारे दिगम्बर भाइयों का कहना है कि यह किल्ला सम्वत् १८६३ में दिगम्बर श्रावकने बनवाया और इस विषय का शिलालेख भी कहते हैं। लेकिन किल्ला बनवाने का समय तो दूसरा प्रतीत होता है। क्यों कि इस किल्ले के बाबत गांव सलूम्बर के रहनेवाले रोडजी गुरजीने सम्वत् १८६० महा सुदी १५ गुरुवार को श्री केशरियाजी की लावनी बनाई उस में बयान किया है कि।

" देवल तो मजबूत बना है। उपर इंडा सोने का ॥
" ओलुं दोलुं कोट बनाया। सब संगीनबंध चुने का ॥१४॥

इस को पढने से पाया जाता है कि मन्दिर के चारों तर्फ किल्ला सम्वत् १८६० से पहले का बना हुवा था। लावनी बनानेवाले बतलाते हैं कि चारों तर्फ मजबूत कोट चुने का बना हुवा है और मजबूत कोट तीन साल बाद ही जीर्ण नही हो सकता। इस के सिवाय सेठ सुलतानचन्दजीने सम्वत्

१८८९ में नोबतखाना बनवाया तो छब्बीस साल के बाद ही ऐसा किस तरह हो सकता है कि ऐक सम्प्रदायवाला पूरा कोट–किल्ला बनावे और आगे का मुख्य द्वार याने नौबतखाना दूसरे सम्प्रदायवाले को बनवाने देवे। इस के सिवाय श्री चारभुजाजी महाराज का मन्दिर जो सम्वत् १७६४ में बना है उस को देखते हैं। और आगे चलकर श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथजी का मन्दिर जिस की प्रतिष्ठा सम्वत् १८०१ में हुई है उस को देखने बाद किल्ले की दीवार से मिलान करते हैं तो अच्छी तरह मालूम हो जाता है कि इन दोनों मन्दिरों की तामीर से पहले किल्ला बना हुवा है। इन दोनो मन्दिरों की तामीर याने दीवार दरवाजा व आंगन को देखने से कहना पडेगा कि किला बनवाये बाद यह दोनों मन्दिर बनवाये हैं। इस तरह के प्रत्यक्ष प्रमाण देखने बाद यह किला सम्वत् १८६३ में दिगम्बर भाईने बनवाया हो यह कथन सत्य प्रतीत नही होता। लेकिन ऐसा साबित करने के लिये जो शिलालेख सम्वत् १८६३ का कहा जाता है उस को दृष्टिगत रखते हुवे कहना पडेगा कि शिलालेख का इतना साफ मतलब नही निकलता होगा कि दिगम्बर भाईने ही बनवाया हो। हमारी समझ में तो ऐसा आता है कि उस समय किल्ला कुछ उंचा कराया हो। और यदि उंचा कराया हो तो किल्ला पहले का बना हुवा साबित होता है। लेकिन सम्वत् १८६३ में कुछ उंचा कराया हो तो यह सम्भव है, क्यों कि श्री पार्श्व-

नाथ भगवान के मन्दिर के पास वाली दीवार से आगे जो किले की दीवार है वह कुछ उंची बनी हुई है। और अनुमान होता है कि किसी दिगम्बर भाविक श्रावक के पास श्रीकेशरियानाथजी के नाम का द्रव्य निकाला हुवा हो या चमत्कार–भक्तिवश कुछ द्रव्य इस तीर्थ में खर्च करने आये हों और तीर्थरक्षकोंने दीवार उंची बनवाने की इजाजत दी हो। तो इस का यह मतलब नहीं होता के किला ही दिगम्बर भाईने बनवाया है। और नौबतखाना सम्वत् १८८९ में कुंवर सुलतानचन्दजीने बनवाया जिस की प्रशस्ति भी नौबतखाने पर इस तरह की मौजूद है।

नौबतखाने के लेख की नकल.

ॐ श्री केसरियानाथजी रे नोबतखानारी प्रशस्त लिख्यते। शुभ संवत् १८८९ रा शाके १६५४ प्रवर्तमाने मासोत्तमे मासे मृगसिर मासे शुक्लपक्षे दशम्यां तिथौ रविवासरे श्री षडक देशे श्रीधुलेवनगरे श्रीदेवाधीदेव श्रीरिखबदेवजी महाराज के नगारखानारी प्रतिष्ठा करि जिणरी प्रशस्ती श्रीमहाराजाधीराज महाराणाजी श्री श्री श्री श्री श्रीजवानसींघजी विजयराज्यै करापितं जेसलमेरु वास्तव्य ओसवाल ज्ञाती वृद्ध शाखायां बाफणा गोत्रे शु श्रावक पुन्य प्रभावक श्रीदेवगुरुभक्तिकारक श्रीजिनाज्ञा प्रतिपालक पंचपरमेष्ठी महामंत्र स्मरणात् सम्यक्त मूल स्थूल द्वादश व्रतधारक सर्व सुभबोल लायक संघ नायक सेठजी श्रीगुमानचंदजी तत्पुत्र बहादरमलजी सवाइसंघ मगनी-

राम जोरावरमल्ल प्रतापसिंघ कुंवर सुलतानचंद भभुतसिंघ दानमल श्यामसिंघ हिमतसिंघ जेठमल चन्दणमल लघुपुत्र पुनमचंद गंभीरमल दीपचंद ईंद्रचंद सरुपचंद्रादि श्रीसपरिवारेण श्रीधुलेवनगरे श्रीरीषभदेवजी महाराज रे नगारखानो करायो धजादंड चढायो श्रीउदेपुर सुसंघ लायके महोत्सव करायो अट्ठाई महोत्सव करायो अट्ठाइ महोत्सव प्रतिष्ठितं बृहत्खरतर गणे वर्तमानं भट्टारक श्रीजिनहर्षसूरिणां आदेषात् किर्तीरत्न-सूरी साषायां। उ चारित्रोदय गणितात् शिष्य पं० ऋषभदास तत् शिष्य पं० कृशलचंद्रेण उपदेशात् कामदार जेष्ठमल्लजी तत्पुत्र ऋषभदास भद्रं भूयात् । श्री। भंडारी दलीचंदजी भंडारी आदमजी ॥ श्री ॥ श्री।

इस तरह नौबतखाने का स्पष्ट शिलालेख देखने से और सम्वत् १६८५ से लगायत सम्वत् १८८९ तक के प्रमाण देखते हुवे इस मन्दिर का बनवाना व मालीकाना हक और कब्जा जैन श्वेताम्बर समाज का ही साबित होता है । और दिगम्बर भाई भी सम्वत् १७०२ से सोने व चांदी आदि की आंगी वगैरह का पहनावा जारी होना मानते हैं। अतएव सिद्ध होता है कि दिगम्बर भाइयों की मान्यतानुसार श्वेताम्बर विधिविधान से पूजन तो पहले से ही होती आई है, लेकिन आंगी का आरोप २८७ वर्ष से चला आता है। इस तरह मन्दिर के बनवाने का वृत्तान्त शिलालेखादि से जैसा समझ में आया बयान किया गया है, और यह मन्दिर हर सूरत में

जैन श्वेताम्बर समाज का है और श्वेताम्बर मतानुसार बना है, व पूजन अर्चन भी श्वेताम्बरीय विधिविधान से होती आई है।

इस के सिवाय एक और संगीन प्रमाण यह है कि श्वेताम्बर समाज के बनवाये हुवे सैंकडों प्राचीन मन्दिर बावन जिनालयवाले लाखों रुपयों की लागत के इस समय मौजूद है। उन में से एक मन्दिर श्रीकेसरियानाथजी का भी समझना चाहिये, और दिगम्बर सम्प्रदाय के बावन जिनालयवाले मन्दिर देखने में नहीं आये इस से भी यह साबित होता है कि यह तीर्थ श्वेताम्बर सम्प्रदाय का है।

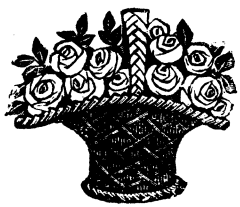

श्री १००८ श्री केसरियानाथजी महाराज.

श्रीमान् स्वर्गवासी—
महाराणाधिराज.

वर्तमान—
महाराणाधिराज.

विराजे हुवे हैं।

प्रतिमा प्रकरण.

जैन श्वेताम्बर तीर्थ श्रीकेसरियानाथजी में श्रीऋषभदेव भगवान के श्याम पाषाण के करीब तीन फुट उंचे प्रतिमाजी बहुत प्राचीन प्रतिष्ठापित है, जिस का कुछ वर्णन सम्वत् १९४७ में श्रीमान् झवेरसागरजी महाराजने प्रकाशित कराया है। जिस में यह सिद्ध किया गया है कि यह प्रतिमा गांव बडौद जो इस समय डुंगरपुर राज्यान्तर्गत है, वहां से दैव-योग से धूलेव गांव में आये। इस कथन को श्रीमान् गौरीशङ्क-रजी ओझा भी प्रमाणित मान कर निज के बनाये हुवे राजपूताना के इतिहास में लिखते हैं कि—

"यह प्रतिमा डुंगरपुर राज्य की प्राचीन राजधानी बडौद के जैन मन्दिर से लाकर यहां पधराइ गई है। पृष्ठ ३४६ "

इस तरह मुनि महाराज श्रीझवेरसागरजीने जो "श्रीकेशरियाजी तीर्थनो वृत्तांत" नाम की पुस्तक प्रकाशित कराई है, उस में लिखा है कि—

" श्रीकेसरीयाजी उर्फे रिषभदेवजी की मूर्त्ति जे हाल श्रीधुलेव नगर में बिराजमान हे, ते श्रीमुनिसुव्रतस्वामी बीस में तीर्थंकर के सासन में प्रतिवासुदेव रावण की वखते लंका में विराजमान थी वांसे श्रीरामचंद्रजी रावण से जीत कर अयोध्या आते हुवे श्रीकेशरियाजी की मूर्तिकुं साथ लेते आए सो श्रीउज्जेण में बिराजमान कीइ, ...उजेण से कोई कारण पाकर श्रीकेशरीआनाथजी की मुरती बागडदेश, बडोद गाम में आइ, वां कोइ वरसों तक बिराजमान रही.

बडोद गाम सें, धुलेव के नजीक जीहां हाल में श्रीकेशरीआजी का पगला हे उस ठेकाणे देवप्रयोग से जमीन में मुरती आइ, इत्यादि.

उपर के कथन से सिद्ध होता है कि श्रीकेशरियानाथजी महाराज की प्रतिमा बागड देशान्तर्गत बडौद गांव से यहां लाई गई है, और बडोद में श्रीकेशरियानाथजी महाराज के चरण स्थापित हैं जिन की केशर पुष्प से पूजन होती है। और इस समय भी बडौद गांव के निकटवृत्ति गांवो में जैन श्वेताम्बर श्रावकों के घर हैं। एक जमाने में इन्ही प्रतिमाजी के कारण बडौद गांव तीर्थस्थान गिना जाता था ऐसा इतिहास से पता

चलता है, और इस का संक्षेप वर्णन मालवा देशान्तरगत माडवगढ (माँड्) के पेथडशाह का चरित्र जिस को मुनि महाराज श्रीसुकृतसागरजीने प्रतिपादित किया है उस में पृष्ठ २२ पर लिखा है कि—

" नागह्रदे नागपुरे नासिक्य वटपदयो ।
सोपारके रत्नपुरे कोरटे करहेटके ॥ ४५ ॥

उक्त कथन करते चरित्र में बयान किया गया है कि मंत्रीश्वर पेथडशाहने चौरासी तीर्थों में मन्दिर बनवाये जिन तीर्थों में करेडा (मेवाड) का नाम लिखते " वटपदयो " बडौद का भी उल्लेख किया गया है । और होना ही चाहिये क्यों कि जिस जगह सर्वमान्य भव्याकृतिवाली–प्रभाविक–चमत्कारी–भगवान की मूर्त्ति स्थापित हो वह स्थान तीर्थ स्वरुप माना जाय जिस में कोई आश्चर्य नहीं है । और ऐसे प्रमाणों से भलीभांति सिद्ध हो जाता है कि जिस प्रतिमाजी के लिये पेथडशाहने बडौद का मन्दिर जो प्राचीन काल से तीर्थस्वरूप माना जाता था उसी मुवाफिक मान कर वहां मन्दिर बनवाया और वही प्रतिमाजी धुलेव गांव में आये बाद भी तीर्थरूप मान्यता होना बडी बात नहीं है । यह श्वेताम्बरीय प्राचीनता का प्रमाण है ।

इस के सिवाय यही प्रतिमाजी बडौद में जिस स्थान पर विराजमान थे उस जगह पादुका स्थापित है, और उन की

पूजन श्वेताम्बर विधि अनुसार केशर पुष्प से होती है और कब्जा भी श्वेताम्बर समाज का है। इस विषय में महामहोपाध्याय रायबहादूर गौरीशङ्कर हीराचंदजी ओझाने मेवाड राज्य का इतिहास छपवाया जिस के प्रथम भाग पृष्ट ४२ पर बयान किया है कि—

" यह प्रतिमा डूंगरपुर राज्य की प्राचीन राजधानी बडौदे (वटपद्रक) के जैन मन्दिर से लाकर यहां पधराई गई है। बडौदे का पुराना मन्दिर गिर गया है और उस के पत्थर वहां वटवृक्ष के नीचे एक चबुतरे पर चुने हुवे हैं। ऋषभदेव की प्रतिमा बडी भव्य और तेजस्वी है।

उपर के कथन से ओझाजी साहब भी इस प्रतिमा का बडौद में स्थापित रहना मंजूर करते हैं, और निज के बनाये हुवे मेवाड इतिहास के प्रथम भाग पृष्ट ४० पर लिखते हैं कि—

" यहां पूजन की मुख्य सामग्री केसर ही है। और प्रत्येक यात्री अपनी इच्छानुसार केसर चढाता है। कोई कोई जैन तो अपने बच्चों आदि को केसर से तोल कर वह सारी केसर चढा देते हैं। प्रातःकाल के पूजन में जल-प्रक्षालन, दुग्ध-प्रक्षालन, अत्तर-लेपन आदि होने के पीछे केसर का चढाना प्रारंभ हो कर एक बजे तक चढता ही रहता है।

धूलेव में प्रतिमाजी के पूजन की सामग्री का बयान ओझाजी

साहबने किया तदनुसार यहांपर मनो के तोल से केसर चढाई जाने से यहां का नाम श्रीकेसरियानाथजी प्रसिद्धि में आया। इस तरह का बयान श्री केसरियानाथजी की प्रतिमा का करने बाद बावन जिनालय की और द्रष्टि करते हैं।

देखते हैं तो पता चलता है कि इस समय बावन जिनालय में प्रतिमायें स्थापित हैं। उन में से बहुत प्राचीन काल के तो नजर नही आते, यहां तक कि पन्द्रहवीं सदी के प्रतिष्ठित भी मौजूद नहीं हैं। अलबत्ता बावन जिनालय के सामने खडे रहते दाहिने व बांये हाथ की तर्फ जो बडे मन्दिर हैं, उन में सम्वत् १७४६ में श्रीमान् विजयसागरजी महाराजने प्रतिष्ठा कराई वह प्रतिमा स्थापित हैं। श्रीकेसरियानाथजी की प्रतिमा के अतिरिक्त इस मन्दिर के खेला मण्डप में २२ और दैवकुलिकाओं में ५४ चौपन मूर्त्तियां बिराजमान हैं, जिन का उल्लेख श्रीमान् ओझाजीने निज के बनाये हुवे मेवाड राज्य का इतिहास प्रथम भाग पृष्ठ ४३ पर लिखा है कि—

" इस मन्दिर के खेलामंडप में तीर्थंकरों की २२ और दैवकुलिओं में ५४ मूर्त्तियां बिराजमान हैं देवकुलिकाओं में विक्रम संवत् १७५६ की बनी हुई विजयसागर सूरि की मूर्ति भी है और पश्चिम की दैवकुलिकाओं में से एक में अनुमान ६ फुट उंचा ठोस पत्थर का एक मन्दिर सा बना हुवा है जिस पर तीर्थंकरों की बहुतसी छोटी छोटी मूर्त्तियां खुदी है। इस को लोग गिरनारजी का बिंब कहते हैं।

उपर्युक्त ७६ मूर्त्तियों में से १४ पर लेख नही हैं। लेखवाली मूर्त्तियों में से ३८ दिगम्बर सम्प्रदाय की और ११ श्वेताम्बर की है.....लेखवाली मूर्त्तियां वि० सं० १६११ से १८६३ तक की हैं।

उपर के कथनानुसार सम्वत् १७५६ की बनी हुई श्रीमान् विजयसागरसूरिजी महाराज की मूर्त्ति व इन्ही आचार्य महाराज की प्रतिष्ठा कराई हुई सम्वत् १७४६ की प्रतिमा स्थापित है जिन को देखने से भलि प्रकार समझ में आजाता है कि श्वेताम्बरीय मन्दिर है तब ही श्वेताम्बर जैनाचार्य की मूर्त्ति यहां स्थापित की गई है। अगर अन्य सम्प्रदाय या धर्म का मन्दिर होता तो जैनाचार्य विजयसागरसूरिजी की मूर्त्ति कौन स्थापित करने देता ?

श्रीमान् विजयसागरजी महाराज विजयगच्छ के थे जिन की मूर्त्ति करीब डेढ फुट उंची विद्यमान है। आप का अंतिम काल भी धुलेव नगर में ही हुवा हो, और आप के भक्त-सेवकोंने यादगार के लिये यह स्थापना की हो ऐसा अनुमान होता है। सूरिजी महाराजने मेवाड देश में बहुत विहार किया हो एसा पाया जाता है क्यों कि सयाजी महाराज के बडौदे के पास "छाणी" गांव हैं वहां के जैन श्वेताम्बर मन्दिर में श्रीआदिनाथ भगवान की प्रतिमा स्थापित है, उन के

पद्मासन पर सम्वत् १७३२ में प्रतिष्ठा कराई जिस का लेख है और वह इस प्रकार है—

" ए०० श्रीगणेशाय नमः । स्वस्ति श्री (म) जिनेन्द्राय, सिद्धाय परमात्मने । धर्मात्वयकश्शाय " ऋषभाय नमो नमः । संवत् १७३२ वर्षे शाके १५८७ प्रवर्तमाने वैशाख शुक्ल पञ्चम्यां गुरौ पुष्य नक्षत्रे श्रीमेदपाटदेशे श्रीवृहत्तशके श्रीच (चि)त्रकोट पति सीसोदिया गोत्रे महाराणा श्रीजगतसिंहजी तद्वंशोद्धरणधीर महाराजाधिराज महाराणा श्रीराजसिंहजी विजयराज्ये श्रीवृहत् ओसवाल ज्ञातीय सीसोदीया गोत्रे सुर-पुरीया वंशे संघवी श्रीतेजाजी–चतुर्थ पुत्र सं. दयालदासजी तद्भार्या सूर्यदेपातमदे पुत्र सांवलदासजी तद्भार्या मृगादे समजु परिवार सहितौ श्रीऋषभदेव–श्रीविजयगच्छे श्रीपूज्य कल्या-णसागर सूरीन्दाः तत्पट्टे श्रीपूज्य श्रीसुमतिसागर सूरिवर तत्पट्टे श्रीआचार्य श्रीविजयसागरसूरिभिः श्रीऋषभदेव विंबं प्रतिष्ठितं।

इस लेख का यह मतलब पाया जाता है कि मेवाडदेश की राजधानी का मुख्य नगर राजनगर जो महाप्रतापी वीर शिरोमणी महाराणा राजसिंहजी (औरङ्गजेब से बाजी लेने–वाले) की राजधानी का मुख्य स्थान था वहां पर इन छाणी–वाले प्रतिमा की प्रतिष्ठा हुई है; और सम्भव है क्यों कि राजसमुद्र जिस को महाराणाधिराज राजसिंहजीने बनवाया जिस की प्रतिष्ठा महाराणासाहबने सम्वत् १७३२ में कराई है। और महाराणासाहब के प्रधान-मंत्री दयालशाहने राज-

समुद्र के किनारे पर एक पहाड की बुलन्दी पर एक बहुत बडा मन्दिर लगभग एक क्रोड रुपये खर्च कर के बनवाया है, उस की प्रतिष्ठा भी सम्वत् १७३२ में श्रीविजयसागरजी महाराजने कराई है। और उस समय की अङ्जनशलाका में छाणी गांव वाले प्रतिमाजी भी हो तो संम्भवित है।

श्रीमान् विजयसागरसूरिजी की प्रतिमा के सिवाय इन्ही के चरण भी सम्वत् १७५६ के यहां स्थापित हैं, और आपने प्रतिष्ठा कराई जिस का लेख पब्भासन व प्रदक्षिणा में एक थम्बे पर मौजूद है।

इस वृतान्त पर से यही तय होता है कि सम्वत् १७३२ में दयालशाह के मन्दिर की प्रतिष्ठा कराने बाद सम्वत् १७४६ में आपने श्रीकेशरियानाथजी तीर्थ में बावन जिनालय की प्रतिष्ठा कराई हो। और दस साल के बाद ही आप का आयुष्य पूर्ण हो गया हो, और एसे समय में भक्तिवन्त श्रावकोंने या श्रीमान् दयालशाह जो आचार्य महाराज के भक्त थे इन्होंने यादगार में प्रतिमा और चरण की स्थापना कराई हो एसा पाया जाता है।

इस तरह एक ही आचार्य की मूर्त्ति, चरण व अन्य शिलालेख–प्रतिष्ठा लेख सम्पादन हैं तो यही सिद्ध होता है कि यह मन्दिर जैन श्वेताम्बर संप्रदाय का है।

और आचार्य महाराज के परम भक्त दयालशाह भी विजयगच्छ की मान्यतावाले थे, और पूरे धर्मिष्ठ श्रद्धावन्त श्रावक थे। इस लिये आपने अपने गुरु महाराज की मूर्त्ति तीर्थ केसरियाजी में स्थापित कर गुरुभक्ति बतलाई हो तो यथास्थाने समझना चाहिये। और उपयुक्त प्रमाणों से यह भी भली प्रकार सिद्ध होता है कि संवत् १७३२ से लगा कर संवत् १७९६ तक दयालशाह के जमाने में श्रीमान् विजयसागरजी महाराज के समय भी पहले के मुवाफिक श्वेताम्बर समाज का सम्पूर्ण अधिकार था। इस प्रकार श्रीकेसरियाजी महाराज के प्रतिमाजी व बावन जिनालय में स्थापित हैं उन के विषय में विचार करने बाद बाहर के हिस्से में जो श्रीजगवल्लभ पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा प्रतिष्ठापित है उन का वर्णन वहां की प्रशास्ति से ज्ञात हो जाता है। जिस की नकल इस पुस्तक में आ चुकी है.

श्रीजगवल्लभ पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा जमीन में से प्राप्त हुई है, एसे लेखवाली प्रशास्ति मन्दिर में मौजूद है। और इस प्रतिमा के साथ और भी प्रतिमायें प्राप्त हुई हैं। जिन सब की प्रतिष्ठा सम्वत् १८०१ में तपागच्छाचार्य श्रीसुमतिचन्द्रजीने कराई है, एसा उल्लेख प्रशस्ती में है। और जमीन में से श्वेताम्बरीय प्रतिमा का प्राप्त होना इस बात की

गवाही देता है कि मन्दिर पहले से ही श्वेताम्बरीय हो, और कारणवशात्—संयोगवश—उपद्रवादि के सबब प्रतिमाजी को जमीन में प्रवेश कर दीये हों, और वह समय आये जमीन से बाहर निकल आवे तो यह बात सम्भवित है। इस तरह से यह जगवल्लभ पार्श्वनाथ भगवान की मूर्त्ति प्राचीन काल की व श्वेताम्बरीय और श्वेताम्बराचार्यद्वारा प्रतिष्ठित यहां स्थापित है। इस तरह प्रतिमाओं का वर्णन पूरा हुवा अब पादुका का वर्णन करेंगे।

पगल्या प्रकरण.

इस मन्दिर में स्थापित प्रतिमाओं का वर्णन करने बाद चरणस्थापना की ओर लक्ष जाता है। और देखते हैं तो प्रथम तीर्थंकर श्रीऋषभदेव भगवान के माताजी मरुदेवी की मूर्त्ति मन्दिर में जाते सिढीयों की छत पर पाषाण के हाथीपर स्थापित है, उन के पास ही श्रीमान् सिद्धिचन्द्रजी भानुचन्द्रजी के चरण स्थापित किये हुवे हैं, और इन के स्थापित करने का सम्वत् १६८८ पाया जाता है। श्रीमान् सिद्धिचन्द्रजी भानुचन्द्रजी का नाम इतिहास जाननेवालों से छिपा नही है। आपने "कादम्बरी" नाम के ग्रन्थ की टीका बनाई है और आप उच्च कोटी के विद्वान थे। और बादशाह अकबर के साथ आप का गाढ सम्बन्ध था। आपहीने बादशाह अकबर को

प्रतिबोध देकर जीवहिंसा बंध कराई थी, और श्रीमान् हीरविजयसूरिजी महाराज के पास जैन तीर्थों का परवाना भी आप ही के साथ भेजा गया था। इस के अतिरिक्त "कृपारस कोष" के कर्ता भी आप ही हैं। जिस को प्रकाशित करते श्रीमान जिनविजयजी पृष्ठ २३ पर बयान करते हैं कि—

"सिद्धीचन्द्र भी शांतिचंद्र ही के समान शतावधानी थे इस से इन की प्रतिमा के अद्भुत प्रयोग देख कर बादशाहने इन्हें "खुशफहेम" की मानप्रद पट्टी दी वे फारसी भाषा के भी अच्छे विद्वान थे" इस लिये और भी बहुत से अकबर के दरबारियों के साथ इन की अच्छी प्रीति हो गई थी।

इन ही महानुभाव के चरण सम्वत् १६८८ के प्रतिष्ठित मरुदेवी माता के हाथी के पास स्थापित है। यह तमाम इतिहास श्वेताम्बर सम्प्रदाय के हक्क में प्रबल हैं, क्यों कि सम्वत् १६८५ में मन्दिर के शिखर की पूर्णता और सम्वत् १६८८ में श्रीमान् सिद्धिचन्द्र, भानुचन्द्र के चरण की स्थापना यह प्रमाण कितना मजबूत है। और इन से यह सिद्ध होता है कि सम्वत् १६८८ में भी श्वेताम्बर समाज का इस तीर्थ पर पूर्ण अधिकार था।

एक बात और जानने योग्य है कि दिगम्बर सम्प्रदाय में स्त्री को मोक्ष प्राप्त होना नहीं मानते और इसी वजह से भगवान श्रीऋषभदेवजी के माता जिन का नाम "मरुदेवी"

था, उन का भी मोक्ष में जाना स्वीकार नही करते। इस विषय में श्वेताम्बर सम्प्रदाय की यह मान्यता है कि स्त्री का मोक्ष होता है, और मरुदेवी माता का भी हाथी पर बैठी हुई का मोक्ष हुवा है, जिस का कुछ वृत्तान्त हम यहां बतलाते हैं।

प्रथम तीर्थंकर श्रीऋषभदेव भगवान राज्य वैभव छोड कर साधु-निर्ग्रन्थ अवस्था में आये बाद विहार कर गये और लोगों को उपदेश देते रहे। बहुत समय निकल जाने पर भी वापस वनिता नगरी की तरफ नहीं आये थे। इसलिये पुत्रवियोग के कारण वात्सल्यभाव से मरुदेवी माता नित्य प्रति प्रभु को याद किया करती थी और कभी कभी भरत चक्रवर्ती को कहती थी के हे पौत्र। मुझे ऋषभ से मिलादे! इस प्रकार पुत्रावियोग और चिन्ता के कारण वृद्धावस्था में मरुदेवी माता के नैत्रोंपर पर्दा छा गया। एकदा श्रीऋषभदेव भगवान जब वनिता नगरी के समीप पधारे और वनरक्षकने यह समाचार भरत चक्रवर्ती को पहुंचाये। फिर क्या था? आनन्द छा गया और भरत महाराजने शीघ्र ही मरुदेवी माता के निकट जा कर प्रभु के आगमन की खबर सुनाई। मरुदेवीजी अत्यन्त हर्षित हुई, और भरत चक्रवर्तीने प्रभु के दर्शनार्थ जाने की तैयारियां कराली। मरुदेवीजी को हाथी पर बिठलाई गई और रवाना हुवे कुछ रास्ता पार करने के बाद दैवरचित रत्नजडित समवसरण नजर आया, जिस की महिमा भरत महाराज मरुदेवीजी को बताने

लगे कि मध्य भाग में आठ प्रतिहार्यवाले आप के पुत्र विराजमान हैं और आसपास देवों का समुदाय सेवा में उपस्थित हो उपदेश श्रवण कर रहा है। देखते देखते मरुदेवीजी के नेत्रों पर से पर्दा हट गया और पुत्र को देव वैभव में देवता जिन की चाकरी में हाजीर हैं देखते ही मरुदेवीजी कहने लगी के हे पुत्र! इतना भारी वैभव देवरचित समवसरण और देवता तेरी सेवा में खडे हैं। इतना सुख पा जाने पर भी तूंने माता को कभी याद न की। मैं अभागिनी तुझे नित्य प्रति याद करती रही, और चिन्ता में थी के मेरा पुत्र दीक्षा ग्रहण किये बाद विहार कर गया है और न जाने वह कैसे कैसे कठिन परिषह सहन करता होगा ? लेकिन कोई किसी का नही है। किस का पुत्र और किस की माता। इस तरह मरुदेवीजी अनित्य भावना के ध्यान में मग्न हुई और तुरन्त ही हाथीपर बैठी हुई को केवलज्ञान प्राप्त हो गया और कुछ समय के अन्तर मोक्ष को सिधाई। पाठक! समझ में आ गया होगा कि यही भाव श्रीकेसरियानाथजी के तीर्थ में बतलाया गया है कि सामनै श्रीऋषभदैव भगवान बिराजित हैं और उन की तरफ दृष्टि करती हुई मरुदेवीजी हाथीपर बैठी है—और मोक्ष सिधाई, जिस का यह अनुपम दृश्य श्वेताम्बरीय समाज की मान्यता का प्राचीन प्रमाण बतलाता है।

अब बगीचे में जो भगवान के चरण स्थापित हैं उन का कुछ बयान करेंगे। यहां की यात्रा करनेवाले यात्री यह सुन चुके होंगे कि श्रीकेसरियानाथजी की प्रतिमा जमीन में से दैव-

योग से प्रगट हुई थी और उस जगह लोग–यात्रीगण जाकर केसर के छांटे दीया करते थे। वहांपर एक छोटीसी देवरी–मन्दिरी बनवाई गई और सम्वत् १८६३ में श्रीमान् विजय-जिनेन्द्रसूरिजी महाराज जिन के उपदेश से यह छतरी बनवाई थी। आपहीने इस छतरी में चरण स्थापना–प्रतिष्ठा सम्वत् १८६३ जैष्ट सुदी चतुर्दशी गुरुवार को बडे ही समारोह के साथ कराई, जिस की प्रशस्ति इस प्रकार है और तत्स्थान में मौजूद है।

" स्वस्ति श्रीसंवत् १८६३ वर्षे शाके १६३६ वर्तमाने मासोत्तममासे शुभकारी ज्येष्ठ मासे शुभे शुक्लपक्षे चतुर्दशी तिथौ गुरुवासरे उपकेशज्ञातीयां वृद्धि शाखायां कोष्ठागार गोत्रे सुश्रावक पुण्यप्रभावक श्रीदेवगुरुभक्तिकारक श्रीजिनाज्ञा प्रतिपालक साह श्रीसंभुदास तत् पुत्र कुलोद्धारक कुलदीपक सीवलाल अंबाविदास तत्पुत्र दोलतराम ऋषभदास श्रीउदेपुर वास्तव्य श्रीतपागच्छे सकल भट्टारक शिरोमणि भट्टारक श्री श्री विजयजिनेंद्रसुरिभिः उपदेशात् पं० मोहनविजयेन श्री धुलेवा नगरे ॥ भंडारी दुलिचंद आगुं छइं। "

उपर मुवाफिक चरण स्थापना के सिवाय श्वेताम्बराचार्य श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराज जो दादासाहब के नाम से प्रसिद्ध हैं जिन के चरण–पादुका भी सम्वत् १९१२ फाल्गुन वदी ७ गुरुवार को स्थापित हुवे हैं, जिस का लेख तत् स्थान में मौजूद है जिस की नकल इस प्रकार है। देखिये।

"संवत १९१२ का मिति फागुन वदि ७ तिथौ गुरुवासरे श्रीधुलेवा नगरे श्रीक्षेमकीर्ति शख्योद्भव महोपाध्याय श्रीरामविजयजी गणी शिष्य महोपाध्याय शिवचंद्रगणि शिष्य.... चंद्रमुनिना शिष्य मोहनचन्द्र युतेन श्रीसत्गुरु चरणकमलानि कारितानि महोत्सवं कृत्वा प्रतिष्ठापितानि च वर्तमान श्रीबृहत्खरतरगच्छ भट्टारकाज्ञाय श्रीअभयदेवसूरि जिनदत्तसूरि जिनचन्द्रसूरि जिनकुशलसूरिणां चरणन्यासः—

यह प्रमाण जङ्गम वस्तु का है। प्रतिमा का प्रमाण अस्थिररूप में होता है, क्यों कि कहां पर अञ्जनशलाका, कहां प्रतिष्ठा और कहां प्रतिष्ठापिता इस का कोई नियम नहीं है। इस लिये अस्थिर वस्तु के लेख उपर से स्थावर वस्तु का मालीकाना हक्क साबित करने को न्यायदृष्टि से अनुकूल नही होता। अतः यहां जो प्रमाण दिये गये हैं वह बाग (वाडी) जो स्थिर रूप में है उस के दिये गये हैं। इस तीर्थ में जो श्वेताम्बरीय मूर्त्तियां सेठ दयालशाहने बनवाई वह और नगरसेठ बाफणा कुटम्ब वालोंने बनवाई वह बिराजमान है, तथापि इन के लेखादि को सिबूत में न लेकर श्रीविजयसागरजी महाराज की मूर्त्ति का लेख सिबूत में लिया गया जिस की यह वजह है कि श्वेताम्बराचार्य की मूर्त्ति एक स्थान से हटा कर अन्य स्थान में लेजा कर स्थापित नहीं कराई जाती। इस कारण गुरुमूर्त्तियां स्थिर और नियमित मानी गई है जो प्रमाण में दी जाना आवश्यक समझ बयान किया गया है। इस के अतिरिक्त

अहमदाबाद में डहेला के उपाश्रय में बिराजनेवाले श्रीरूपविजयजी पंन्यास के चरण भी यहां स्थापित हैं। इन सब की पूजन आदि क्रिया भण्डार की ओर से होती है इस से यह सिद्ध होता है कि इस तीर्थ पर प्राचीन प्रमाण श्वेताम्बरीय सम्पादन हैं; क्यों कि विजयगच्छ के, खरतरगच्छ के और तपागच्छवालों के चरण यहां पर स्थापित हैं। इस लिये गच्छ मान्यता का भी कोई प्रश्न बाकी नही रहता। श्रीमान् पंन्यासजी महाराज रूपविजयजी के चरण जो सम्वत् १९०९ में स्थापित कराये गये जिस के लेख की नकल इस प्रकार है।

॥ ९६० ॥ सं० १९०५ ना वर्षे वैशाख मासे शुक्लपक्षे अक्षयत्रतीया दिवसे श्रीतपागच्छाधिराज भट्टारक श्रीविजयसिंहसूरि वीनययोगाचार्य श्रीसत्यवीजयगणि तत्पट्टे योगाचार्य श्रीसत्यवीजयगणि तत्पटे योगाचार्य श्रीखिमाविजयगणि तत्पटोध्याद्रि मार्तंडायमान योगाचार्य श्रीजिनविजयगणि तत्पटे योगाचार्य विद्वत जिनोत्तम श्रीउत्तमविजयगणि तत्पटे कोर्वीद्कुलकमल दिनकराय मानयोगाचार्य श्रीपद्मविजयगणि तत्पटपंकज मधुकरायमान पन्यास विद्वद जिनसीरोमणि रूपविजयगणि ततपादुका श्रेयो निमितं प्रतिष्ठीतं पं० अमिविजयगणि भीः शुभं भवतु।

इस तरह के प्रमाण जैन श्वेताम्बर समाज के चरणस्थापना विषय के मौजूद हैं।

ध्वजदंडारोहण प्रकरण.

पाठक ! आप को याद होगा कि ध्वजादण्ड चढाने के बाद कई तरह के वितण्डावाद उपस्थित हुवे थे। सच पूछो तो वह आपसी वैमनस्यभाव का एक अंश था जो कि सम्वत् १९८४ में वर्तमानपत्रोंद्वारा प्रकाश में आया था। हम अब आप को यह बतलाना चाहते हैं कि ध्वजा दण्ड चढाने के अधिकारी कौन हैं ? मन्दिर के प्रमाण, मूर्त्तियों के प्रमाण और चरण स्थापना के प्रमाण, श्वेताम्बर समाज के बहुतायत से मिलते हैं तो ध्वजदण्डारोहण के लिये नया प्रमाण ढूंढने की कोई आवश्यक्ता नही पाई जाती; तथापि इस तीर्थ में ध्वजादण्डादि किसने किस समय में चढाये इस का जहांतक पता लगा है हम पाठकों के सामने रखते हैं।

सम्वत् १८८९ में सेठ सुलतानचन्दजीने नोबतखाने का

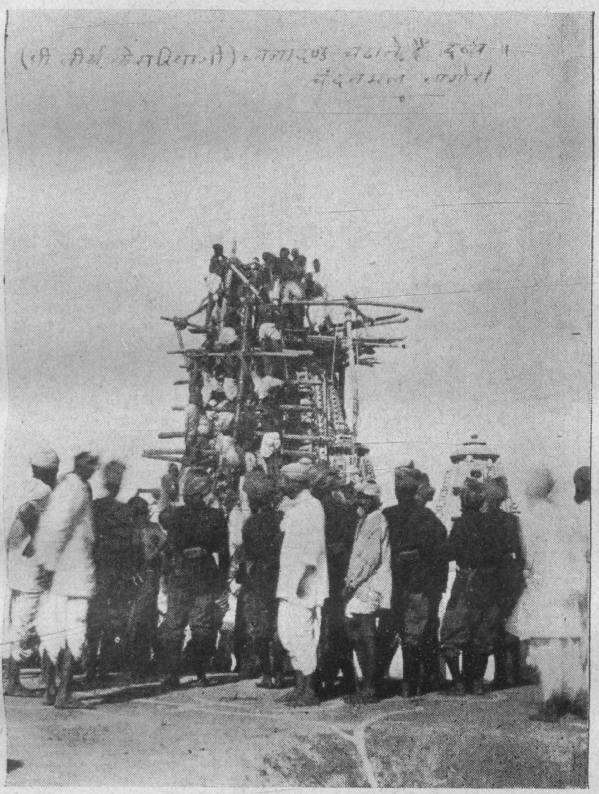

श्री केसरियाजी तीर्थ पर ध्वजादंड
चढाया गया जिस का एक दृष्य।

आनंद प्रिन्टिंग प्रेस–भावनगर.

काम पूरा कराया जिस के लेख की नकल मन्दिर प्रकरण में लिख चुके हैं। इन्ही सेठजीने सम्वत् १८८९ में ध्वजादण्ड चढाया है, जिस का प्रमाण याने ध्वजादण्ड की पटडी जो अद्यापि भण्डार में मौजूद है। उस पर लिखा है जिस की नकल यहां दी जाती है सो पढने से पाठकों के समझ में आजायगा कि श्वेताम्बर समाज के प्रमाण कितनी तरह से मजबूत और मानने योग्य है।

ध्वजादंड की पाटी के लेखकी नकल.

श्रीईष्टदेवाय सुभ संवत् १८८९ रा. शाके १६५४ प्रवर्तमाने मीगशर मासे शुक्लपक्षे दशम्यां रविवासरे षडकदेसे श्रीधुलेवनगरे श्रीदेवाधिदेव श्रीरीखबदेव महाराजरे दंड चढाव्यो महाराजाधीराज महाराजाजी श्री श्रीयुवानसिंघजी राज्यै जेसलमेरु वास्तव्य ओसवालज्ञातिय वृद्धिशाखायां बाफणा गोत्रे शेठ बहादूरमल, सिवाईसि, मगनीराम, जोरावरमल्ल, प्रतापसिंघ, कुंवरसुलतानचंद, सपरिवारेण करापितं, प्रतिष्ठितं सर्व सूरिभीः ऋदहाश उपदेशात् भंडारी श्रीदलसंदजी भाइचन्दजी श्रीरस्तु। भद्रं भूयात्।

इस लेख से स्पष्ट सिद्ध होता है कि धुलेव के श्रीकेसरियानाथजी तीर्थ में जो ध्वजादण्ड चढाया गया वह सेठ सुलतानचन्दजीने श्वेताम्बराचार्यद्वारा विधिविधान करा के चढाया है। कितनेक विरोध करनेवाले कहते हैं कि सुलतान-

चन्दजी दीवान—मंत्री थे और राजसत्तावाले थे इस कारण ध्वजादण्ड चढा दिया, लेकिन यह कथन प्रमाण रहित है। क्यों कि सेठ सुलतानचन्दजी जब धुलेव गांव की तरफ रवाना हुवे हैं तब भण्डारी के नाम महाराणाधिराज श्रीजवानसिंहजी से एक पत्र लिखवा कर ले गये हैं। अगर राजसत्ता का मद होता और बल का उपयोग कर ध्वजादण्ड चढाया होता तो महाराणासाहब के कागज की आवश्यकता नहीं होती। देखिये कागज की नकल।

श्रीरामजी श्रीएकलिंगजी
सावत श्रीनाथजी

स्वस्ति श्री हजूररो हुकम श्री रिखबदेवजी भंडारी पंडा है अपरंच धजादंड चढ़ावा सारुं सुलतानचंद आयो है सो कामकाज में हाजर रेजो ओर श्री भगवानरे आभूषणारी रकम गेणा की चढे सो अठे मालुम हुइ के पंडा मांगे नाखें है सो या बात ठीक नहीं, आभूषणाकी रकम सावतरे ने पंचा की तथा जोरावरमल की सुरत सुं उठे भंडार को बंदोबस्त रहे कोइ बातरी कसर पडी है तो ओलंभो पाओगा. संवत् १८८६ मिगसर वद १४

इस पत्र को देखते यही तय होता है कि कुंवर सुलतान-चंदजीने यह पत्र धुलेव के भंडारीयों के नाम अपनी सुविधा के लिये लिखाया होगा। मंत्रीपदवाला निज के अधिकार-वाले गांव में जावे और पत्र की आवश्यकता समझे यह मानने

श्री केसरियानाथजी तीर्थ पर
ध्वजादण्डारोहण का दुसरा द्रष्य ।

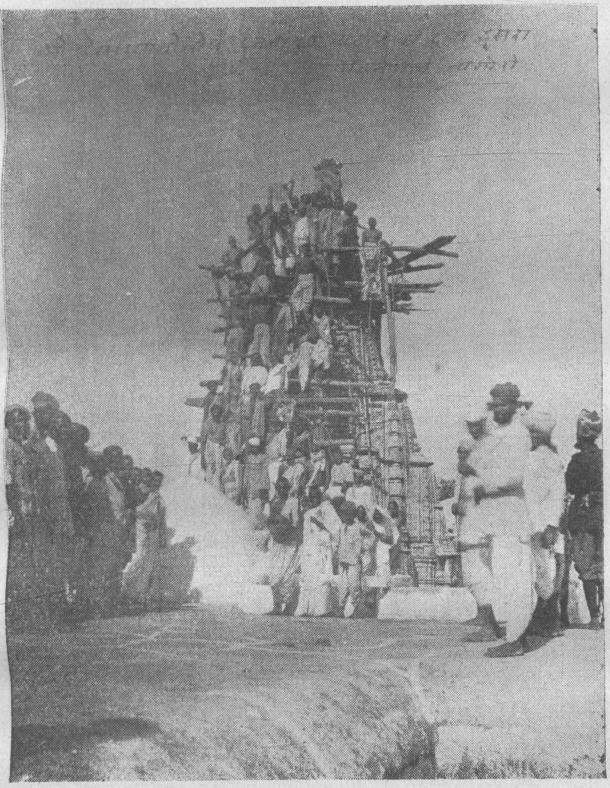

आनंद प्रिन्टिंग प्रेस–भावनगर.

योग्य कथन नहीं है। इस पर से यह पाया जाता है कि इस तीर्थ पर ध्वजादण्डारोहण की क्रिया प्राचीन काल से श्वेताम्बर समाज की ओर से ही होती आइ है, और तदनुसार सेठ सुलतानचंदजी का भी यह सम्बत् १८८९ का स्तुत्य प्रयास है और महाराणा साहिब की उदारता तो धर्मकार्यों में जग-प्रसिद्ध है ही। आपने सेठजी को सानुकुल समय–सामग्री–सेवा पण्डो की तरफ से सम्पादन हो और किसी तरह की असुविधा न हो इस हेतु से पत्र लिख दीया जो सेठ सुलतान-चन्दजी को सहायक हुवा।

महाराणासाहब पत्रद्वारा आभूषण चढाने की प्राचीन प्रथा को जाहिर कर भण्डारी पंडो की ओर से बेपरवाही का जिकर कर आभूषण अखंड रखने की सूचना देते हैं। और आभूषण की रक्षा में या ध्वजादंड चढाने के कार्य में किसी तरह की खामी रह जायगी तो फिर उपालम्भ देने की धमकी बतलाई गई है। और ठीक भी है मेदपाटेश्वर–मेवाडनाथ का लक्ष हमेशा धर्म की तीर्थ की रक्षा पर रहता आया है। इस के बाद सम्वत् १८८४ वैशाख सुदि पञ्चमी को ध्वजादण्ड चढाया गया इस ध्वजादण्ड के चढाने से पहले दिगम्बर भाईयों की ओर से एक द्रख्वास्त श्रीमान् महाराणाधिराज श्री फतेहसिंहजी की सेवा में पेश हुई थी जिस में यह आशय लिखा था कि—

सम्वत् १९८५ में ध्वजादण्ड चढाया गया था और उस समय दिगम्बर सम्प्रदाय के भट्टारकद्वारा प्रतिष्ठा कराई गई

थी जिस का लेख ध्वजादण्ड की पटरी पर मौजूद है, और उस समय कुंवर सुलतानचंदजी मेवाड के प्रधान थे वगैराह।

द्रख्वास्त उजरदारी पेश होने पर श्रीमान् महाराणासाहबने इस की पूरे तौर जांच कराई व तेहकिकात के लिये एक कमीशन नियत किया जिस में सरकारी मेम्बर इस मुवाफिक मुकर्रर हुवे।

श्रीमान् रायबहादुर पण्डित धर्मनारायनजी साहब

बी. ए. बार–एट–लॉ.

श्रीमान् बाबू मदनमोहनलालजी साहब बी. ए. एलएल. बी.

श्रीमान् पण्डित भोलादत्तजी शास्त्री एम. ए. एलएल. डी.

श्रीमान् पण्डित अश्वनीकुमारजी साहब बी. ए. एलएल. बी.

इन चार साहबान को नियत किये जो दोनो सम्प्रदाथ को समानभाव से देखनेवाले हैं। आपने पूरे तौर जांच की तो पाया गया के अव्वल तो उस समय कुंवर सुलतानचंदजी दीवानपद पर नियत नहीं थे और न कभी बाद में यह पद इन को सौंपा गया (प्रथम ग्रासे मक्षिका)। दोयम ध्वजादण्ड सम्वत् १८८९ में नही किन्तु सम्वत् १८८९ में चढाना पाया जाता है और सोयम श्वेताम्बर आचार्योंद्वारा प्रतिष्ठा होकर श्वेताम्बर विधिविधान से चढाया गया है जिस का लेख ध्वजादंड की पटरी पर मौजूद है। इस प्रकार पूरे तौर जाँच होने बाद रिपोर्ट होने पर भी हमारे दिगम्बर भाई हठवाद को नहीं छोडते जिस का अफसोस है। दिगम्बर बन्धुओं की ओर से इस विषय में एक अरजी श्रीमान् महाराणा साहब के नाम

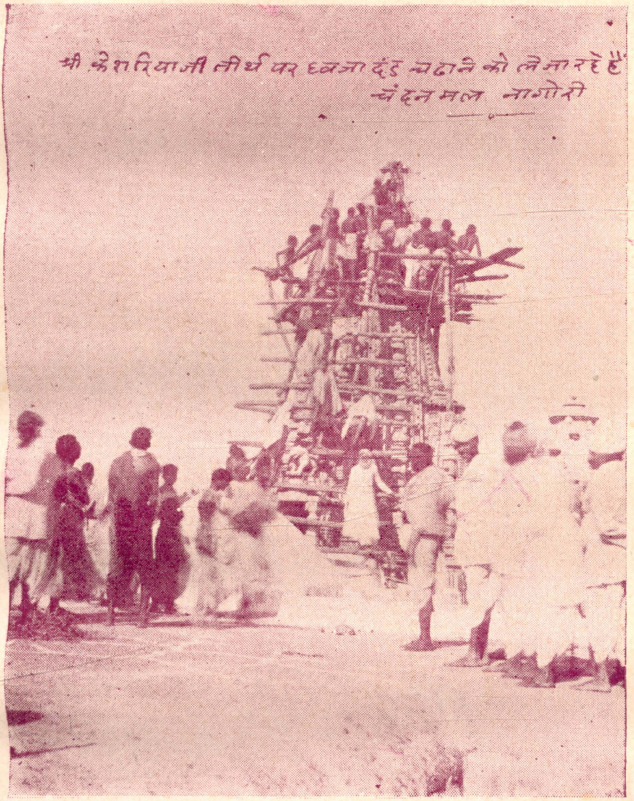

श्री केसरियानाथजी तीर्थ पर ध्वजादण्ड
चढाया गया जिस का तीसरा द्रष्य ।

आनंद प्रिन्टिंग प्रेस–भावनगर.

श्री केसरियानाथजी तीर्थ में ध्वजादंड
चढानेवाले—

आगमोद्धारक आचार्य महाराज श्री १०८
श्री सागरानंदसूरिजी.

卐

आनंद प्रेस–भावनगर.

श्रीभारतवर्षीय दिगम्बर तीर्थक्षेत्र कमेटी हीराबाग बम्बई से सेठ चुनीलाल हेमचन्द के दस्तखतवाली तारीख बाइस नौंबर सन् उन्नीसो तेइस की लिखी हुई श्रीमान् महाराणा साहब के पास पेश हुई है वह पढने लायक है। उस की नकल मुझे सम्पादन न हो सकी वरना मैं पाठकवर्ग के सामने रखता और उस का कुछ अंश में उत्तर भी देता। खैर इस जीकर को जाने दिजीये। महाराणाधीराजने न्यायबुद्धि से ध्वजादण्ड चढाने की आज्ञा देकर दैवस्थान व मगरा जिल्ले के हाकिम साहबान को भेजे। इतजाम कराया और तैयारीयां होने बाद सम्वत् १९८४ वैशाख सुदि ५ को श्रीमान् सेठ पूनमचन्दजी करमचन्दजी कोटावाले पाटन (गुजरात) निवासीने पांच हजार एक रुपया नगद भेट कर के ध्वजादंड चढाया जिस की तमाम क्रिया-विधि श्रीमान् आगमोद्धारक सागरानन्दसूरिजी की अध्यक्षता में हुई, और ध्वजादण्ड की पटरी पर लेख लिखाया गया जिस की नकल इस प्रकार है।

" वीर संवत् २४५३ विक्रम संवत् १९८४ वैशाख शुक्ल पञ्चम्यां शुक्रवासरे मेदपाटेश्वर महाराणाधीराज महाराणाजी श्री १०८ श्री फतहसिंहजी महाराज कुमार श्री भूपालसिंहजी राज्ये श्रीं धुलेवनगरे श्री १००८ श्री आदिनाथाधिष्ठते श्री केशरियाजी संज्ञके तीर्थे एते त्तीर्थ सत्कोदय पुरीय श्री श्वेताम्बर संस्थया ध्वजदण्डयोरारोपः कारितः प्रतिष्ठा च कृता तपागच्छाचार्य श्री आनन्दसागरसूरिभि. शुभं भवतु.

यह ध्वजादंडारोहण का अधिकार समाप्त हुआ।

पूजा प्रकरण.

(Indian Antiquary Vol. I. 1872, Page 96.)

FAMED RIKHABNATH:—A large and ancient naubatkhana (room for musicians) overhangs the great gate. The temple itself is made up of a series of temples, all connected; in each are images of the Jaina Lords. Of course the great image is there. The inner shrine is shut off from the rest of the building by gates plated with silver. Each full moon from the bhandar the high priest brings forth address valued at a lakh and a half of rupees where with to deck the god, whilst gold & silver vessels are used in puja. All day long devotees lie prostrate before the shrine, whilst others offer saffron upon

pillars upon which are supposed impressions of the feet of the god, All the rulers in Rajputana send gifts to Rishabnath·saffron, Jewels, money and in return receive the high priest's blessing. (Abridged from the Times)

पूजन के बाबत इन्डीयन एन्टीकवरी पुस्तक प्रथम सन् १८७२ पृष्ठ ९६ अंग्रेजी में लिखा है जिस का अनुवाद इस मुवाफिक है ।

विख्यात रीखबनाथ.

भव्य दरवाजा के जिस पर एक बडा और पूराना नौबत-खाना है । यह मन्दिर भी कितनेक मन्दिर एक एक हारबन्ध की तरह बना है । प्रत्येक मन्दिर में जैन देव की मूर्त्ति है । जो कि महान मुख्य मूर्त्ति तो जो भव्य है, मध्य मन्दिर में बिराजमान है । अन्दर की मूर्त्ति के दर्शन चांदी की प्लेटों से सुशोभित दरवाजे के कारण दूसरे भाग में से नही हो सकते । त्प्रयेक पूर्णिमा के दिन भण्डार भराता है । मूर्त्ति को श्रृंगारने के लिये लगभग एक लाख पचास हजार रुपयों के आभूषण मुख्य कारभारी लाता है । पूजा में सोने व चांदी के बरतन काम में लिये जाते हैं । तमाम दिन मूर्त्ति के सन्मुख हरएक भक्त दण्डवत–प्रणाम करता है और कितनेक भक्त स्थम्भ उपर के दैव की मूर्त्तियों के चरण पर केसर चढाते हैं । राज-

पूताने के तमाम राज्यकर्तागण केसर, झवाहीर और द्रव्यादि वगैराह अमूल्य भेट रीखबनाथ देव के चढाते हैं और बदले में शुभ आशीस लेते हैं।

फीर दूसरा लेख १८०८ का देखिये।

Extract From The Imperial Gazetteer of India-

VOL, XXI (New Edition 1908) Pages 168-169

The Principal image is of black marble and is in a sitting pasture about three feet in hight; it is said to have been brought from Gujrat to wards the end of the thirteenth entuey Hindus as well as the Jains .....

....

the latter as one of the twentyfonr Tirthankers or hierachhs of Jainism the Bhils Call him Kalaji, frcm the colour of the image and have great faith in him. Another name is Kesaryaji from the saffran (Kesar) with which pilgrims Besmere the idol. Every vatary is entitled to wash off the paste applied by a previous worshipper, and

in this way Saffron worth thousands of rupees is offered to the God annually.

(Indian Antiquary, VOL. I.)

उपर के लेख का भावार्थ यह है कि, मूख्य मूर्त्ति श्याम पाषाण की तीन फीट उंची आसन (बैठी) स्थिति में है। एसा कहते हैं कि तेरहवीं सदी के अन्त में गुजरात में से इस मूर्त्ति को ले गये थे। हिन्दु और जैन इन दैव की पूजा करते हैं। जैनी लोग चौवीस तीर्थंकरों में से एक मान कर इन की पूजा करते हैं। मूर्त्ति के वर्ण उपर से भील लोक इन को कालाजी कहते हैं और अत्यन्त श्रद्धापूर्वक भक्ति करते हैं। यात्री लोग मूर्त्ति पर केसर चन्दन आदि का लेप करते हैं जिस से यह दैव केसरियाजी के नाम से पहचाने जाते हैं। पहले के पूजारी (यात्री) ने केसर चन्दन का लेप किया हो उसे धो कर साफ करने का बाद में पूजा करनेवाले पूजारी (यात्री) को हक्क है। इसी कारण हजारों रुपयों का केसर चन्दनादि प्रति वर्ष मूर्त्ति (दैव) पर चढाया जाता है।

उपर के दोनो लेखों से यह साबित होता है कि केसर बहुतायत से चढाई जाने के कारण यह तीर्थ व प्रतिमा श्रीकेसरियाजी कहे जाते हैं और लाखों रुपयों की लागतवाली आंगीया आभूषण चढाये जावे हैं, और हजारांह रुपये भेट होते हैं वगैराह।

श्री केसरियानाथजी के प्रथम नाम निक्षेपे को देखते हैं तो यही तय होता है कि केसर बहुतायत से चढाई जाती है इस लिये यह नाम प्रसिद्धि में आया। इस विषय को स्पष्ट करने से पहले हम एक और बात बताना चाहते हैं, और वह यह है कि दिगम्बर सम्प्रदाय के महानुभाव जो इस तीर्थ को दिगम्बरी बतलाते हैं उन के यहां प्रतिमा–पूजन का क्या विधान है सो देखलेना प्रसंगोचित है।

दिगम्बर सम्प्रदाय में दो मत हैं। प्रथम बीसपन्थी, दूसरे तेराहपन्थी, इन में से बीस पंथी समाज के श्रावक तो मूर्त्ति को जल प्रक्षालन करा के पैर के दाहिने अंगूठे पर चन्दन चढाते हैं और अन्य द्रव्यादि सामने रखते हैं, और तेराह-पन्थी समाज के श्रावक जल प्रक्षालन करा लेते हैं और द्रव्यादि सामने चढाते हैं। दोनों मतवाले मूर्ति पर आभूषण धारण नहीं कराते–मुकुट कुंडल धारन कराना भी मना है। इस प्रकार दिगम्बर समाज के श्रावक दोनो मत-वाले अपनी अपनी मर्यादा विधान सहित पूजन–अर्चन करते हैं। लेकिन केसर की पूजा को माननेवाले नहीं हैं अर्थात् केसर नहीं चढाते बल्के जिस मूर्त्ति पर आभूषण केसर चढाई हुई होती है उस मूर्त्ति को वन्दन स्तवन भी नहीं करते और करने में दोष मानते हैं। इन के यहां धर्मशास्त्रों में केसर पूजा व आभूषण धारण कराने का उल्लेख नहीं है। इस से पाया जाता है कि तीर्थ केसरियाजी में जो प्रचलित

प्राचीन विधान पूजा का चला आता है, उस को दृष्टिगत रखते यह तीर्थ दिगम्बर सम्प्रदाय का मालूम नहीं होता।

श्वेताम्बर मतानुसार पूजन प्रक्षालन आदि का विवरण इस प्रकार है कि प्रक्षालन से अव्वल जो कोई पूजा करना चाहे तो अष्ट द्रव्य के अत्यन्त सुगन्धमय वासक्षेप से पूजा कर सकता है, और जल प्रक्षालन के बाद दुग्ध प्रक्षालन हो कर फिर जल से प्रक्षालन कराया जाता है। अङ्ग कपडे से साफ कर धूप–अगर खेवे जाते हैं, और बाद में अत्तर विलेपन होता है। फिर चन्दन मिश्रित बरास–कपूर या चन्दन मिश्रित केसर से पूजा की जाती है। और श्री केसरियानाथजी में तो चन्दन मिश्रित बनाने का समय भी नहीं मिलता क्यों कि बहुत से भाविक श्रावक तो अपने बच्चों को केसर से तोल कर सारी केसर एक साथ ही चढा देते हैं। केसर पूजा के बाद पुष्प धारण कराये जाते हैं, और फिर आभूषण–मुकुटकुण्डल का पहनावा कराया जाता है, और हजारों लाखों रुपयों की लागतवाली आंगीया धारण कराई जाती है। इस प्रकार करने बाद आरत्रिक उतारने का रिवाज है। यह सब विधान श्वेताम्बर समाज की मान्यतानुसार यहां पर होता आया है। एसी हालत में यह तीर्थ किस सम्प्रदाय का कहा जाय सो पाठक स्वयं सोच सकते हैं।

यह प्रतिमाजी गांव बडौद में बिराजमान थे तब डूंगरपूर

दरबार की ओर से केसर-धूप-दीप के खर्चे के लिए एक गांव जागीर में निकाल दिया था, और शायद अब तक पूजारीयों के पास है। इसी तरह जब यह मूर्त्ति धूलेव में प्रगट हुई तो श्रीमान् महाराणाधिराज की ओर से धूलेव गांव जागीर में दिया गया जिस की आमदनी से खर्च अबतक निभता रहता है। और फौज पलटन वगैराह सब धूलेव भंडार की यहां रहती है जो समय समय पर सलामी वगैराह लेती है और पहरा देती है।

इस तीर्थ में पूजन का विधान किस प्रकार है? जिस का वर्णन करते हुवे श्रीमान् ओझाजी निज के बनाये हुवे "मेवाड राज्य का इतिहास" प्रथम भाग पृष्ठ ४० पर लिखते हैं कि–

"धूलेव नामक कस्बे में ऋषभदैव का प्रसिद्ध जैन मन्दिर है। यहां की मूर्त्ति पर केसर बहुत चढाई जाती है जिस से इन को केसरियाजी व केसरियानाथजी भी कहते हैं।

और इसी पृष्ठ पर फुटनोट में बयान किया है कि—

"यहां पूजन की मुख्य सामग्री केसर ही है और प्रत्येक यात्री अपनी इच्छानुसार केसर चढाता है। कोई कोई जैन तो अपने बच्चों आदि को केसर से तोल कर वह सारी केसर चढा देते हैं। प्रातःकाल के पूजन में जल-प्रक्षालन, दुग्ध प्रक्षालन, अतरलेपन आदि होने के पीछे केसर का चढना प्रारंभ होकर एक बजे तक चढता ही रहता है।

श्रीमान् (स्वर्गवासी) महाराणाधीराज श्री १०८ श्री
फतहसिंहजी बहादुर, जी. सी. एस. आई. जी. सी.
बी. ओ. जिन्होंने दोलाख पेतीस हजार की आंगी भेट की.

भूतपूर्व महाराणाओने समाज हित साधन कीने ।
जैन समाजों को तो प्रभूवर तन मन धन सब ही दीने ।
तेही कारण है भवन भव्य जैनों के राज मे अतिभारी ।
मेवाड भूमि के शासक थे पर सब भारत के अधिकारी ।

आनंद प्रिन्टिंग प्रेस–भावनगर.

श्रीयुत् ओझाजी के कथनानुसार यही पूजन का विधान यहां प्रचलित है, जिस का संक्षेप वर्णन हम आगे लिख चुके हैं और यह श्वेताम्बर मतानुसार शास्त्रसिद्ध विधान है।

इस तीर्थ की महिमा प्रभाव—और चमत्कार देख कर भक्तिवश प्रेमपूर्वक बडे हजूर महाराणाधिराज श्रीफतहसिंहजीने एक आंगी जो हीरजडित है जिस की कींमत लगभग २३५००० दो लाख पैंतीस हजार के करीब है। निज के निज खर्च द्रव्य व्यय से बनवा कर भेट स्वरूप रख धारण कराई है और यहां पर आभूषण धारण होने बाबत दिगम्बर बन्धुओं के यहां जो उल्लेख है सो भी हम यहां बताते हैं।

शेठ मानकचन्दजी पानाचंदजी की ओर से प्रकाशित "भारतवर्षीय दिगम्बर जैन डिरेक्टरी पृष्ठ ४७० व ४७१ पर इस तीर्थ केसरियाजी के बाबत बयान है कि—

"मूर्त्ति का प्रातःकाल जल और दुध से अभिषेक कर के केसर चढाते हैं। दो पहर को एक बजे करीब फिर जल और दुध चढता है, पश्चात रत्नों की आंगी और मुगट पहिनाया जाता है, और पुष्पादिक चढाये जाते हैं। रात्रि को आंगी उतार कर सारे अंग में गुलाल चढाई जाती है। यहां के श्रावकों तथा भट्टारक क्षेमकीर्त्ति से मालूम हुवा है कि वि० सं० १७०२ में आंगी का आरोप (पहिनावा) शुरु हुवा है। बडी मूर्त्ति के सिवाय अन्य जो दिगंबरी मूर्त्तियां चारों

तरफ मौजूद हैं उन पर भी आंगी का शृंगार करना संवत् १८४२ में शुरु हुवा है।"

इस लेख के बाद फिर आगे यह बयान किया गया है कि–

"भंडार की तरफ से श्वेताम्बर रीति से पूजन व आरती आंगी आदि होती है और दिगंबरी पूजन भंडार से नही होती है–बडी मूर्त्ति के सिवाय अन्य जो–मूर्त्तियां चारों तरफ मोजूद हैं उन पर भी आंगी का शृंगार करना संवत् १८४२ से शुरु हुवा है।"

उक्त प्रमाण से यह भली प्रकार सिद्ध है कि मूर्त्ति की श्वेताम्बर विधि–विधान से पूजन–अर्चन होते लगभग ३०० तीनसौ वर्ष होने आये, और अन्य मूर्त्तियों पर आभूषणादि आरोप होते भी लगभग डेडसौ वर्ष होने आये। इस कथन को दिगम्बर समाज ही प्रतिपादन करती है तो इतने वर्ष का कब्जा व भुगतभोग दिगम्बर समाज की मान्यतानुसार हो जाने पर भी अब हक्कदारी के प्रश्न को स्थान किस तरह मिल सकता है? सो न्यायदृष्टिवान खुद ही सोच सकते हैं।

और विचार करते हैं तो पाया जाता है कि श्रीकेसरिया-नाथजी महाराज की मूर्ति के पीछे चांदी की पिछवाई बना कर लगाई गई वह भी श्वेताम्बर समाज के श्रावक की ओर से है। देखिये उस पर का लेख।

" श्रीरीषभदेवजी महाराज के पछवाइ धारण कीनी संगवी मगनीराम वा भभुतसीहजी पुनमचंद दीपचंद सोभाग-मल चांदमल बाफणा चांदी सीके रु. १००० भर की चढाइ १९२७ चैत्र वदी १३ वार थावर कारीगर सुनार भगवान भेरुलाल सदर गांमे। "

यह पिछवाई रतलाम के सेठ मगनीरामजी भभूतसिंहजीने अपनी ओर से धारण कराई है। इस के सिवाय इन्ही सेठजी की तर्फ से मन्दिर के मूल (निज) गम्भारे में चांदी का काम बनवाया गया जिस के लेख को भी देख लेना चाहिये।

" १ श्रीऋषभदेवजी महाराज के पछवाई धारण कीनी संगवी मगनीराम व भभूतसिंहजी पुनमचंदजी दीपचंद सोभा-गमल चांदमल बाफणा चांदी सीके रु. १८०० भर की चढाई संवत् १९२७ चेत वदी १३ वार थावर कारीगर सुनार भगवान भेरुलाल सरणा में "

इन दोनो लेखों से एसी गहरी सिबूत सम्पादन हो जाने का मेरा लिखना नहीं है, किन्तु इतना अवश्य मानना पडेगा कि जिस तरह मन्दिर, नौचौकी, मरुदेवीजी का हाथी, नौबत-खाना, श्रीपार्श्वनाथजी का मन्दिर, बाग में छतरी, पादुका, जैनाचार्य की मूर्त्ति व पादुका और रूपविजयजी महाराज के चरण इत्यादि प्रमाण श्वेताम्बर समाज के हक में सिबूत दे रहे हैं। उसी तरह पिछवाई व निज मन्दिर की दीवारों पर

चांदी का काम भी श्वेताम्बर समाज की ओर से हुवा है, और यह प्रमाण भी उन प्राचीन सिबूतो में दाखिल होने लायक है।

तीर्थ में भक्तिवश कोई वस्तु चढाई जावे या जीर्णोद्धार कराया जावे तो इतना करने से ही हक्क प्राप्त नहीं हो जाता है, लेकिन हक्क साबित करने के लिये तो प्राचीन प्रमाण बताने की आवश्यकता होती है जैसा कि इस पुस्तक में बता चुके हैं।

इस तीर्थ में नित्यप्रति, गायन होता है। बिरुदावलीयें बोली जाती है और आरत्रिक उतारने के बाद नियमीत श्रीकेसरियानाथजी का स्तवन जितने मनुष्य हाजीर होते हैं सब एक साथ खडे खडे स्तुति के रूप में बोलते हैं।

रात्री में पुष्प की अंगरचना का दिखाव बडा ही सुन्दर और सुहावना मालूम होता है।

और यहां भांति भांति की आंगिया धारण कराई जाती हैं जैसी जिस के जी में आवे निछराल याने लागत के रूपये दे कर करा सकता है। आंगिया कितने प्रकार की हैं सो यहां लिख देते हैं।

१ सवातीन रुपये में
२ छे रुपयों में
३ तेराह रुपये दो आने में
४ सोलह रुपयों में
५ तेवीस रुपये दो आने में
६ सत्तावीस रुपये दस आने में

७ एकतालीस रुपयों में ८ इक्यावन रुपये चार आने में
९एकसौ एक रुपयों में १० एकसौ सवा नौ रुपयों में

इस तरह आचार्यों की बनाई हुई पूजायें पढाई जाती है और पढानेवाले गान्धर्व तमाम विधि करते हैं या बता देते हैं सो इस प्रकार लागत देने से हो सकती है।

१ स्नात्रपूजा दस आने में
२ पंचकल्याणक पूजा एक रुपया तेरह आने में
३ अष्टप्रकारी दो रुपया पन्द्रह आने में
४ नवपद पूजा तीन रुपया साढेबारह आने में
५ निन्यानवे प्रकार की पूजा पांच रुपया तेरह आने में
६ बारहव्रत की पूजा साढे छे रुपयों में
७ बीसस्थानक पूजा नौ रुपये दो आने में
८ चौवीस जिनराज की पूजा साढे ग्यारह रुपयों में
इस प्रकार पूजन का विधान प्रचलित है।

श्री जैन पोरवाल पंच
जैन ज्ञान भंडार
मु० पाडीव (राज०)

परवाना प्रकरण.

पाठक ! इस प्रकरण में राजवंशीयोंने इस तीर्थ के लिये या इस तीर्थ से सम्बन्ध रखनेवाले परवाने समय समय पर दिये हैं, उन का कुछ बयान करना चाहता हूं सो लक्ष दे कर पढियेगा।

प्रथम मुगल बादशाह अकबर जिन का नाम इतिहास जाननेवालों से छिपा नही है। एक परवाना श्रीमान् हीरविजय-सूरिजी (जो श्वेताम्बराचार्य थे) को लिख दिया हे उस में भी श्रीकेसरियाजी तीर्थ का नाम लिखा गया है जिस की नकल देखिये।

मोगल बादशाह अकबरने निज के राज्य में सेंतीसवें वर्ष में एक पट्टा श्रीमान् हीरविजयसूरिजी महाराज को कर दिया

है। उस पट्टे में इस विषय के साथ सम्बन्ध रखनेवाले फिकरे इस मुवाफिक हैं।

" हीरबीजेसुर (हीरविजयसूरि) जैन श्वेताम्बरी के आचार्य गुजरात के बंदरो में परमेश्वर की भक्ति करते हैं। इन को मेरे पास बुलाया और इन की मुलाकात से मैं बहुत खुश हुआ। उस के बाद इन्होंने अपने वतन में जाते वख्त अर्ज की के—

जो गरीबपरवर की राह पर हुक्म होना चाहिये कि सिद्धाचलजी, गीरनारजी, तारंगाजी, केसरियाजी और आबू के पहाड जो गुजरात में है तथा राजगिरी के पांचो पहाड तथा समेतशिखरजी उर्फे पार्श्वनाथजी जो बंगाल के मुल्क में हैं, वह और पहाडों के नीचे (तलेटी) तमाम मन्दिर की कोठीयां तथा तमाम भक्ति करने की जगह तथा तीर्थ की जगह जो जैन श्वेताम्बर धर्म की तमाम मेरे मुल्क में जिस जगह जो हमारे कब्जे की है उन पहाडों तथा मन्दिर की आसपास कोई आदमी जानवर नही मारे ....यह तमाम पहाड और पूजा की जगह बहुत मुद्दत से जैन श्वेताम्बर धर्म की है। इस लिये इन की अर्ज मंजूर की गई। सिद्धाचल का पहाड तथा गीरनार का पहाड तथा तारंगा का पहाड तथा केसरिया का पहाड तथा आबू का पहाड जो गुजरात के मुल्क में है वह तथा राजगिरी के पांचो पहाड

तथा समेतशिखर उर्फे पार्श्वनाथ पहाड जो बंगाल में है यह तमाम पूजा की जगह हीरबीजेसुर जैन श्वेताम्बर आचार्य को देदी गई है.... ...वगैराह

श्रीमान् अकबर बादशाहने यह दस्तावेज सम्वत् १९३९ में जैनाचार्यजी को लिख दी जिस की पूरी नकल " कृपारस कोष " व " सूरीश्वर और सम्राट " नाम की पुस्तकों में छपी है, और यह परवाना श्रीमान् सिद्धिचन्द्रजी भानूचन्द्रजी जो आचार्य श्रीहीरविजयसूरिजी के शिष्य थे और बादशाहने आप को " खुशफहम " की पदवी दी थी व इन के चरण तीर्थ केसरियानाथजी में मरुदेवीजी के हाथी के पास ही स्थापित हैं, इन के साथ आचार्य महाराज के पास परवाना भेजा था । जिस का सिबूत कृपारस कोष पृष्ठ ३९ पर छपा है और मूल ग्रन्थ पृष्ठ २१ पर बयान है कि—

" यज्जीजिया आकर निवारण मेषचक्रे, या चैत्यमुक्तिरपि दुर्दममुद्र लेभ्यः । यद्बन्दिबन्धनमपा कुरुते कृपाङ्गो यत्सत्करो त्यवमराजगणो यतीन्द्रान् ॥ १२६ ॥

य जन्तु जातमभयं प्रतिमा सषट्कं यच्चाज निष्टविभयः सुरभी समूहः इत्यादि शामनमनुनतिकारणेषु ग्रंथोऽयमेव भवतिस्म परं निमित्तम् ॥ १२७ ॥

बिलकुल साफ बात है कि उक्त कथन व परवाने से भी यह तीर्थ श्वेताम्बर समाज का ही साबित होता है, और

श्रीमान् सम्राट महोदयने परवाना लिख सूरिजी महाराज के पास भेजा जिस का हाल धीरवीर शिरोमणि महाराणाधिराज प्रतापसिंहजी को मालूम होने पर आपने अनुमोदनापूर्ण एक परवाना सूरिजी महाराज के नाम लिख भेजा था, जिस की नकल भी पाठकों के सामने है। देखिये–

" स्वस्ति श्री मगसूदा नगर महाशुभस्थाने सरव ओपमालायक भट्टारकजी महाराज श्रीहीरविजयसूरिजी चरणकमलायण्यु स्वस्ति श्रीविजय कटक चांवड म....श सुथाने महाराणा-(धी)राज श्रीराणा परतावसिंहजी ली० पगेलागणो बंचसी अठारा समाचार भला है आपरा सदा भला चाहिजे आप बडा है पुजनीक है सदा करपा राखे जीसुं शेष्ठ रखावेगा अप्रंच आपरो पत्र अणां दिना मांही आयो नही सो करपा कर लिखावेगा श्रीबडा हजूर के वखत पधारवो हुवो जींसमे अठासुं पाछा पधारतां पादशाह अकबरजीने जैनाबाद में ग्यानरो प्रतिबोध दीदो जीरो चमत्कार मोटो बतायो जीवहिंसा चुरखलो तथा नाम पंखेरु की बेती सो माफ कराई जीरो मोटो उपकार कीदो सो श्रीजैनरा गर में आप अस्याहीज (उद्योत) उद्योतकारी अबार इसमे देखतां आपजुं फेरवे नही आखी पुरव हिन्दुस्थान अंतरवेद गुजरात सुदां चारों ही देशा में धरमरो बडो उद्धोत (उद्योत) कर देखाणो जठा पाछे आप को पधारणो हुवो नही सो कारण कंइ–देगा पधारसी आगासुं पटा परवाना कारणरा दस्तुर माफीक आपरे है जी माफीक

बोल मुरजाद सामा आवारी कसर पडी सुणी सो काम कारण लेखे भुल रही वेगा जीरो अंदेसो नही जाणेगा. आगासुं श्री हेमाचारजजीने श्रीराज महेमान्या है जीरो पटो कर देवाणोजी माफीक मान्या जावेगा श्री हेमाचारजजी पेली श्रीबडगछरा भट्टारकजीने बडा कारण सुं राज महें मान्या जी माफीक आपने आपरा पगरा गादी उपर पाटवी तपगच्छराने मान्या जावेगा इ सिवाय देश में आपरा गछरो देवरो तथा उपासरो वेगा जीरी मुरजाद श्रीराज सिवाय दुजा गछरा भट्टारक आवेगा सो राखेगा श्रीसमरण ध्यान देव जातरा करे जठे याद करावसी परवानगी पंचोली गोरो सं. १६३५ वरसे आसोज सुदी ५ गुरुवार.

इस परवाने को देखते बादशाह के परवाने बाबत और ज्यादे पुख्तगी हो जाती है। महाराणाधिराज के परवाने का भावार्थ विशेष रूप में लिखने लायक है, लेकिन यहां इस से सम्बन्ध नही है। बादशाह के परवाने कोई महानुभाव जाली-बनावटी बतलावे तो यह नही हो सकता क्यों कि इस परवाने के सम्बन्ध में और भी प्रमाण प्राप्त हो सकते हैं। देखिये-

(१) अव्वल तो इस सनद के विषय में मी. केन्डी जो हाईकोर्ट के जज रह चुके हैं वह निज के रिपोर्ट में तारीख २८ दिस्मबर १८७५ ई० को लिखते हैं, जिस का सार इस मुवाफिक है-

श्रावक लोगोंने यह तमाम सनदी कागजात पेश किये यह सच्चे हैं या झूठे, इस के लिये ठाकुरने एहतराज किया हो एसा मेरे ख्याल में नही है। और यह सनदें देखते सच्ची हो एसा पाया जाता है। यह पुराने कागज पर लिखी हुई है और इन पर तरह तरह की मोहरें लगी है और एसी मोहरें बनावटी होना मुश्किल है। इस पर से यह लेख (सनद) असल है–सच्ची है एसा मैं मानता हूँ।

इस के सिवाय इन सनदों के लिये जनाब पोलिटीकल एजन्ट साहब मी० पीलने ता ६ जनवरी सन् १८७६ को बम्बई सरकार के नाम कागज लिखा है उस के पांचवें पारे पर बयान किया है जिस का भावार्थ इस प्रकार है।

" सिबूत (सनद) देखने से मालुम होता है कि दिल्ली के बादशाह के फरमान (पट्टे) से यह पवित्र पहाड श्रावकों के कब्जे में था। और इस की मालिकी बखशीस लेनेवाले की ही बिना किसी तरह की हरकत के पहले से ही रही हो। और एसे मालिकाना हक के लिये यह सनद मजबूत सिबूत हैं। "

इन दोनों लेखों से भी बादशाह का दिया हुवा पट्टा प्रमाणित और असल मानना पडेगा, और पट्टे में तीर्थ केसरियाजी का नाम है सो पाठकों से छिपा नहीं है।

मेवाडनाथने तो जैन समाज की व इस तीर्थ की बहुत

सहायता समय समय पर की है, और कई मरतबा पट्टे परवाने लिखा दिये हैं जिन का कुछ वर्णन हम यहां लिखते हैं।

(३) महाराणा श्रीजगतसिंहजीने सम्वत् १८०२ वैशाख सुदी ६ बुधवार को लिखाया सो अबतक मौजूद है।

(४) सम्वत् १८७४ जेठ सुदी १४ गुरुवार को एक परवाना महाराणाजी श्री भीमसिंहजीने लिखा दिया जिस से भी कुल अधिकार जैन श्वेताम्बर पंचो का पाया जाता है।

(५) सम्वत् १८८२ फाल्गुन वदी ७ बुधवार को एक परवाना सलम्बर के रावजी साहब श्री पदमसिंहजीने सिसोदिया खूमजी के नाम लिखा है। जिस को देखते भी यह पाया जाता है कि इस तीर्थ पर कदीम से जैन श्वेताम्बर पंचो का अधिकार है।

(६) सम्वत् १८८९ जेठ विद ५ रविवार को एक परवाना महाराणाधिराज श्री जवानसिंहजीने समस्त सेवक भण्डारीयों के नाम लिखा है उस में भी यह बयान है कि "नगरसेठ वेणीदासजी विगेरे जैन श्वेताम्बरी पंचो का कह्या माफक काम करज्यो।"

(७) सम्वत् १८८९ जेठ विद १४ का लिखा हुवा परवाना उदयपुर दीवानसाहेब महेताजी श्री शेरसिंहजीने भण्डारी सेवकों के नाम लिखा जिस में भी उपर के परवाने मुवाफिक ही लिखा है।

(८) सम्वत् १९०६ वैसाख प्रथम सुदी ९ को एक परवाना महाराणाधिराज श्री सरुपसिंहजीने भण्डारी जवानजी वगैरह के नाम (१८) अठ्ठारह कलमें मुकर्र कर लिखा दिया जिस की छठ्ठी कलम में बयान है कि—

" सेठ जोरावरमलजी सेठ हुकमींचन्दजी विगेरे पंचों का भला आदमी की सलाह मुजब काम करज्यो "

इस से भी श्वेताम्बरीयों का पूरा हक्क पाया जाता है।

(९) सम्वत् १९०६ वैसाख विद ९ शनिवार को दीवान साहब श्री महेताजी शेरसिंहजीने भण्डारी सेवकों के नाम लिखा है उस से भी श्वेताम्बर समाज का हक्क पाया जाता है।

(१०) सम्वत् १९०७ भाद्रवा सुदी ९ को दीवान साहब श्री शेरसिंहजीने भण्डारीयों के नाम लिखा जिस में लिखा है कि—

" थाने महाराणा श्री सरुपसींघजी कलमबंधी को परवानो कर दीदो है जीं माफक अठा सुं सेठ हकमीचन्दजी माणकचन्दजी बठे आवे है सो बन्दोबस्त करे वीं मुवाफिक कराय दीजो। "

(११) सम्वत् १८८९ मंगसर विद १४ के परवाने की पूरी नकल पहले लिख चुके हैं।

इस के सिवाय भंडारी–पूजारीयों के नाम व भण्डारी–

पूजारीयोंने पंचो के नाम कइ मरतबा कागज लिखे हैं उन में से कुछ नकलें हम यहां लिखेंगे।

A सम्वत् १८९१ महा सुदी २ का कागज भण्डारी कुबेरजी का लिखा हुवा नगरशेठ पंचों जैन श्वेताम्बरी के नाम जिस में बयान हैं कि—

" सदीप की रीती परमाणे सेवा पूजा करांगा और गेणों मुगट कुंडल बाजुबंध कडा हार विगेरे आभूषण सदीप परमाणे धारण करांवेगा छत्र चामर विगेरे सरव सामग्री सेवा में हाजर राखेंगा कसर पाडागा नही। "

B सम्वत् १८७६ मंगसर सुदी १३ भण्डारी दोलतराम दलीचंदने जैन श्वेतांबर पंचो के नाम लिखी जिस में बयान है कि—

" श्री केसरियाजी के धारण वास्ते मुगट कुंडल कडा भुजबंध कंदोरा विगेरेह आभूषण तथा चमर छत्र विगेरे चडेगा तेमां अमारो दावो नहीं "

C सम्वत् १८७६ पोस सुदी १ को एक कागज नगरसेठ वेणीदासजी विगेरे समस्त जैन श्वेताम्बरी पंचो के नाम भण्डारी दलीचंद का लिखा हुवा है जिस से भी साबित होता है कि कदीम से नोकर चाकर कामदारने भेज कर वहीवट कराने का अधिकार जैन श्वेताम्बर पंचो का है।

D परवाना नम्बर ८ जो उपर छपा है उस के जवाब में सम्वत् १९०६ वैशाख सुदी में भण्डारी वगैराहने दीवान साहब के नाम उत्तर लिख भेजा जिस की छट्ठी कलम में लिखा है कि "सेठजी व पंचो का केवा माफिक चालांगा"।

E सम्वत् १९२१ भादवा विद ४ को भण्डारी जवानजी आदमजीने शाह हुक्मीचंदजी बाफणा के नाम लिखा जिस में दरज किया है कि "अठे कदीम से मालकी आप की है" उपर दरज की हुई सिबूतें श्वेताम्बर समाज के हकूक में कितनी मजबूत है सो पाठक स्वयं सोच लें। इस के सिवाय उदयपूर-मेवाड-राज्य की कृपा जैन समाज पर असीम रहती आई है। जिस के कयैक उदाहरण प्राप्त हो सकते हैं। राज्य की कृपा का कुछ अंश हम पाठकों के सामने रखना चाहते हैं, सो नीचे लिखे परवाने पढने से विदित होगा।

नम्बर (१)

स्वस्ति श्री एकलिंगजी परसादातु सही राजाधीराज महाराणाजी श्री कूंभाजी आदे सातु मेदपाटरा उमराव थोबांदार कामदार समस्त महाजन पंच कस्य अप्रंच

आपणो अठे श्री पुज तपागच्छ का तो देवेन्द्रसूरिजी का पग का तथा पुनम्या गच्छ का हेमाचारजजी को प्रमोद है धर्मज्ञान बतायो सो अठे अणां का पग को होवेगा जणी ने

मानांगा पुजांगा परथम तो आगे सुंइ आपणो गढ कोट में नीम दे जद पेलां श्री रीखवदेवजीरा देवरारी नीमदेवाडे है पुजा करे है अबे अजुं ही मानांगा.....
....धरम मुरजाद में जीव राखणो या मुरजाद लोपेगा जणीने.....की आण है और फेल करेगा जणीने तलाक है। सं. १४२१ काती सुदी ५

नम्बर (२)

महाराणा श्रीराजसिंहजी को हुक्म हे. मेवाडरा दस शेंष (गामरा) सरदारां परधाना पटेल पटवार्यां आप आपरा दरजा मुजब वांचज्यो, कदीम जमाना सुं जैनीलोगारां मंदिर व इमारतें गरां को अखत्यार हे इं वास्ते कोइ वणांरी हदां में मारवा तावे जानवरांने ले जावे नही यो यांरो पुराणो हक है। कोइ जीव मनुष्य तथा पशु मारया जावा की गरज सुं वांरे रेवास के पास वेकर निकले वो अमरयो हे राजरा हरामखोर तथा लुटेरा तथा बदमास जी केद सुं भाग्या होवे और वीभाग कर यतियांरा उपासरा महें सरणो लेवे तो वाने राजरा नोकर वठे पकडेगा नही यो हुकम वांचने.....यतियांने कोई सतावे नही परंतु यारां हकुक कायम राखे जो याने तोडेगा वीने राम पुगेगा.....

नम्बर (३)

स्वस्ति श्रीपाटनगर महाशुभस्थाने सरव ओपमा लायक

भट्टारकजी महाराज श्रीविजेजिणेंद्रसूरिजी चरणकमलायेण स्वस्ति श्रीउदयपुर सुथाने महाराजाधिराज महाराणा श्री भीमसिंहजी लिखावतां पगे लागणो बंचावसी अठा का समाचार भला है राजरा सदा भला चाहिजे राज बडा हो पुज्य हो सदा कृपा सुदृष्टि रखावे जणी थी विसेस रखावसी अप्रंच । अणां दिना में कागद समाचार नहीं सो करपा कर लिखावसी और आपरा दरसन की गणी ओलुं आवे है कृपा कर पधारो तो मंहे चंपाबाग सुधी सामां आयने आपे शहर मंहे पदरावां सदा आपरी भेट मुरजाद मारा गुरु कांकरोली श्रीगुसांइजी हे ज्युं आपरी हे अणी में तफावत हे नही और दुजा गछरा भट्टारक तो हे ज्यांरी राह मुरजाद तो माजनारी हे वांरा सरावगांरी हे ने आपरी राह मुरजाद तो मांरा बडारा बांदी है सो.....

.....कांकरोली थी सीवाय मेर मुरजाद राखेगा ज्यादा कंइ लिखां आप बडा हो गुरु दयाल हो अठे वेगा पदार दरसण वेगा देगा अठा लायक कामकाज वे सो लिखेगा चावे सो मंगावेगा अठे तो आपरा हुक्मरी बात हे आगे ही छांगीर चमरां मोरछबां पालखी संज सुदी छडी दुसालो आपरी मुरजाद ठेठथी सो पण मंहे उठे पुगायो सो.....हुवो हो अजुं आप फरमावो ने लिखो जतरुं ओजुं ही नीजर मेलुं दुजा थगी तफावत जाणेगा नही श्रीइष्टदेव सेवा पूजा ध्यान समरण वेलां माने याद करेगा आपरी यादगीरी थी मांरे

कल्याण वेगा वा पडतो कागद समाचार किरपा कर .....सं. १८७४ वरसे काती विदी १४ सनेसर.

नम्बर (४)

सही भालो.

स्वस्ति श्रीउदेपुर सुथाने महाराजाधिराज महाराणा श्री भीमसिंहजी आदे स्नातु मेवाडरा पटायेत सरदार जागीरदार समसथ गामरा महाजना कस्य अप्रंच मेवाडरी सीम में तपागछरा श्रीपुज बीजेजिणेंद्रसूरिजीरा आदेस उथापे ने जती बेठा रहे तथा कोइ जागीरदार महाजन राखे सो अग्या बना राखवा पावे नही अतरा दन रया सो देस दंगा कराया अबे कोइ जबरी सुं रहेगा तथा कोइ राखेगा जणीतीरां थी गुनेगारी लेवायगा ओर गछरो जती गेरवाजबी केवत करेगा नही सदा मरजाद माफक चाल्या जावेगा—परवानगी पंचोली रामकरण सं. १८८३ वरसे जेठ सुदी १३ सुकरे.

नम्बर (५)

भालो सही.

स्वस्ति श्रीउदयपुर शुभ सुथाने महाराजाधिराज महाराणाजी श्रीसरुपसिंहजी आदेसातु मेवाडरा सरदारां जागीरदारां और समसथ गामरा महाजना कस्य अप्रंच मेवाडरी सीम मंहे तपगछरा श्रीपुजजी विजयदेवेंद्रसूरिजीरो आदेस

उथापे ने जती बेठ रहे तथा कोइ जागीरदार महाजन राखे सो आग्या बनां राखवा पावे नही न कोइ जबरीसुं रहे तथा राखेगा जणी तीरांसु गुनेगारी लेवायगा और तीरथ की परते-सटा माल उछव उपधान सदा बंद आगेसुं होवे हे वो वेगा जुनी मरजादा मटेगा नही और इं गच्छरो गेरवाजबी केवत करेगा नही, सदा मुरजाद माफक चाल्या जावेगा परवानगी महेता सेरसिंघजी सं. १९०५ वरसे मंगसर विद ७ सुकरे.

नम्बर (६)

स्वस्ति श्रीजसनगर सुथाने महाराजाधिराज महाराणा श्रीजेसींघजी आदेशातु साह सुरताण तथा साह सुरजमल्ल समस्त महाजना कस्य अप्रंच पजुसण मांहे सदा ही अगतो छुटे हे सो छुटवारो हुक्म हुवो हे परवानगी साह जसो सं. १७५० वरसे भादवा वद १३ सुकरे.

नम्बर (७)

स्वस्ति श्रीअहमदनगरे शुभसथाने सरव ओपमा लायक भट्टारक श्रीविजेयधरणेंद्रसूरिजी एतान स्वस्ति श्रीउदेपुर शुभसथाने महाराजाधिराज महाराणाजी श्रीसजनसिंहजी ली-खावतां पगे लागणो बांचसी अठारा समीचार श्री.....जी की कृपासुं भला हे राजरा सदा भला चाहिजे राजपुज्य हो अप्रंच राज की श्रीऋषभदेवजी की तरफ पधारवा की मालुम हुइ जींसु लीखवो हे के अबर के चातुरमास अठे ही पधार

करेगा पत्र समाचार लिखबो करेगा सवत् १९३४ जेठ वदी ६ सने.

नम्बर (८)

स्वस्ति श्रीभीनमाल सुथाने सर्व ओपमा भट्टारक श्रीविजयविजयराजसूरिजी एतान स्वस्ति श्रीमत उदेपुर सुस्थाने महाराजाधिराज महाराणाजी श्रीफतेसिंहजी लीखावतां पगे लागणो बंचसी अठारा समाचार श्री.....जी की कृपासुं भला है राजरा सदा भला चाहीजे राजपुज हो अप्रंच पत्र आप को आयो समाचार बांच्या दुपडो भेज्यो सो नजर हुवो पत्र समाचार लिखबो करोगा सं. १९४१ जेठ सुदी ९ सुकरे.

पाठक ! आप के सामने आठ परवाने रखे गये और भी सम्पादन हो सकते हैं, लेकिन इस केसरियाजी तीर्थ के इतिहास में इन का सम्बन्ध नहीं है। इस लिये ज्यादे पृष्ठ रोकना नही चाहता लेकिन मेवाड राज्य की कृपा कितने दरजे जैन समाज पर रही है सो उक्त परवानो से कुछ अंश में विदित हो जाती है। इस तरह के परवाने–पत्र–व आज्ञापत्र के देखने से श्वेताम्बर समाज का तीर्थ अच्छी तरह साबित हो जाता है। प्रमाण तो और भी सम्पादन हो सकते हैं लेकिन तलाश करनेवाला चाहिये।

इस के सिवाय एक और खुलासा करना आवश्यकीय है कि यह तीर्थ प्राचीन काल से श्वेताम्बरीय समाज का है और इस

श्रीमान् महाराणाधीराज महाराणाजी श्री १०८ श्री
सर भूपालसिंहजी बहादूर, जी. सी. एस. आई. के.
सी. आइ. ई.

धन्य धन्य मेवाड भूमि जहां हिन्दु कुल छत्तर धारी।
"भूपालसिंहजी" महाराणा है मेदपाट के अधिकारी ॥
करें प्रार्थना जगदीश्वर से मंगल मय प्रभु हितकारी।
रखें चिरायु प्रभु आपको दर्शनेच्छु "चंदन" भारी ॥

आनंद प्रिन्टिंग प्रेस-भावनगर.

तीर्थ का नया इन्तजाम अव्वलतो सम्वत् १९०६ में महाराणाधिराज महाराणाजी श्रीसरुपसिंहजीने कर दिया था। और बाद में फिर सम्वत् १९३४ महाराणाधिराज महाराणाजी श्रीसजनसिंहजीने विशेष रूप से इन्तजाम कर एक कमेटी नियत करदी और सारे आम की वकफियत के लिये इश्तिहार नम्बर १६८१ माह विद ९ सम्वत् १९३४ को सरकार से जाहिर किया गया कें पांच ओसवालों की कमेटी मुकर्रर हो कर काम होवेगा। इस के बाद फिर एक इश्तिहार नम्बर २४९ मंगसर विद १३ सम्वत् १९३५ में जारी हुवा जिस में भी श्वेताम्बरियों की कमेटी से ही इन्तजाम होना दरज है। अब इस से ज्यादा सिबूत और क्या चाहिये ? स्वर्गवासी महाराणाधिराज श्री फत्तेसिंहजी की तो जैन समाज पर असीम कृपा थी। आप की कृपा का वर्णन करने बैठें तो एक पुस्तक तैयार हो जाती है। आपने श्री केसरियानाथजी महाराज के एक जडाउ आंगी जिस की लागत दो लाख पैंतीस हजार रूपया है श्रीजी के भेट कर अपना नाम अमर किया; और इतनी बडी रकम की आंगी भेट करने में आप का पहला नाम है।

वर्तमान महाराणाधिराज श्री भूपालसिंहजी की कृपा भी जैन समाज पर कम नहीं है। आप दयालु व प्रेजा को चाहनेवाले बड़े ही दातार उदारचित्त रहस है। बस इस प्रकरण को ज्यादे लम्बा न बढाकर यहीं पूरा करते हैं।

आपत्ति काल.

इस तीर्थ पर आपत्तियां भी कई दफा आई है। आगे का वृत्तांत तो मालूम नहीं किन्तु इतिहास से यह पता चलता है कि सम्वत् १८६३ में इन्दौर के सदाशिवराव जब मेवाड लूटने को आये तब इस मन्दिर पर भी आक्रमण किया था। जिस का बयान "कर्नल टोड"के बनाये हुवे "टॉडराजस्थान" में पृष्ठ ६१० पर इस प्रकार लिखा है—

"अब देखा कि हुल्कर पर विपत्ति पडी है, तब सब बातें भूल गया और मेवाड से १६ लाख रुपया वसूल करने के लिये शीघ्रता से सदाशिवराव को भेजा। सदाशिवराव आहत मेवाड का रुधिर चूसने के लिये जान व्याप्टिस्ट की कवायद सिखाइ हुई गोलंदाज पल्टन ले कर मेवाड की ओर

चला। सन् १८०६ के जूनमास में यह सेना मेवाड की ओर को बढी...वगैराह."

इस उल्लेख को स्पष्ट करते हुवे श्रीयुत् ओझाजी निज के बनाये हुवे "राजस्थान इतिहास" में पृष्ठ २८६ पर लिखते हैं कि—

"इन मरहटोंने मुगल बादशाहों की अवनति के समय राजपूताने के राज्यों को हानि पहुंचाने में कुछ भी कसर न रखी। मुगलों के समय में तो राजपूत राज्यों की दशा खराब न हुइ, परंतु मरहटोंने तो उन को जर्जरित कर दिया और सब से अधिक हानि मेवाड (उदयपुर राज्य) को पहुंचाइ"

समय सदा एकसा नहीं रहता। धन के लोभी सदाशिवरावने निज के आपत्ति काल में औरों पर आपत्ति डालने की ठानली और वीर भूमि पर आक्रमण करते समय तीर्थ केसरियाजी को भी नहीं छोडा।

सदाशिवरावने जब इस मन्दिर पर चढाई की तब इस को एसा अनिष्ट न करने के लिये राजपूत सरदारोंने बहुत समझाया लेकिन धन की चाहनावाले सदाशिवने एक भी न मानी और मन्दिर पर आक्रमण कर ही दिया। जब सारी सेनाने मन्दिर को घेर लिया और तबाही मचने लगी एसे समय में नीले घोडे पर सवार व भील दल अदृष्य स्थान से उमड आये और सदाशिवराव की सारी सेना पर एक दम धावा

बोल दिया, और एसा जबरदस्त आक्रमण किया कि सदाशिवराव की सारी सेना में तबाही मच गई और तमाम सेनिक भाग गये। और इस सेना में जो नोबत–नक्कारा जो फोज के साथ का था वह भी सेनिक न लेजासके और वह वहीं रह गया, जो अब तक तीर्थ केसरियाजी में पडा है। इस सारी कथा का वर्णन मूलचन्दजीने एक लावनी सम्वत् १८६८ में बनाई जिस में इस प्रकार बयान किया है।

॥ केसरियानाथ की लावणी ॥

सुणजो बातां राव सदाशिव, मत चढ जाना धूलेवा ॥
गढपति उन का बडा अटंका, मत छेडो तुम उन देवा ॥आंकणी॥
सकतावत चुण्डावत बोले, हम हीं नोकर उनहीं का ॥
हीन्दुपति वांकु हाथ जोडे, तीन भुवन शिर हे टीका ॥ १ ॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल सबे ही, सुरनर वाकुं ध्यावत है ॥
इन्द्र चन्द्र मुनि दर्शन आवे, मन की मोजां पावत है ॥ २ ॥
गया राज उन्ही से आवे, निरधनिया कुं धन देवे ॥
बांझ खिलावे सुन्दर लडका, सदा सुखी जे प्रभु सेवे ॥ ३ ॥
तारे जहाज समुद्र में जइने, रोग निवारे भव भव का ॥
भूप भूजङ्गम हरिकरि नदियां, चोरन बन्धन झर दव का ॥ ४ ॥
घों घों घों घोंसा बाजे, दसों दिसा में हे डंका ॥
भाउ तांतिया नहीं भलाई, मत बतलावो गढ बंका ॥ ५ ॥
रानाजी के उमराव का, मानत नाहीं ये बातां ॥
थांरा किया थेहीज पावो, मैं नही आवुं थां साथां ॥ ६ ॥

मुंछ मरोडे चढे अभिमाने, झहर भरा है निजरों में ॥
ऋषभदेव है साहब सच्चा, देख तमासा फजरुं में ॥ ७ ॥
मयाराम सुत भणे मूलचन्द, बडे सितंबर तुम देवा ॥
फोज बिखर गई घर घर घोडा, लज्जा राखो तुम देवा ॥ ८ ॥

श्रीयुत् मूलचन्दजीने उपर की लावनी में श्रीअधिष्ठायक देव की महिमा–चमत्कार बताया है और यह आपत्ति कम नही थी। इसी तरह अकबर बादशाह की सेनाने भी एक समय आक्रमण किया था और उस वख्त मन्दिर के अन्दर से भंवरदल गुञ्जारव करता हुवा निकला और सारी फोज को परेशान करदी–तबाही मच गई और आखिर भागना पडा। इस का बयान भी एक लावनी में प्रतिपादित है, लेकिन इस हकीकत के लिये इतिहास में कोई सिबूत हमारे देखने में नहीं आई। इस के अतिरिक्त भील–पाल बदल गई उस समय उदयपुर से श्यामलदासजी को समझाने के लिये भेजे गये थे, लेकिन भील लोग नहीं समझे और आपस में लडाई छिड गई होते होते भील लोग श्रीकेसरियाजी के मन्दिर के आसपास जमा हो गये और मन्दिर को घेर लिया। जब यह समाचार सेनानायक को मालूम हूवे तो तुरन्त ही मन्दिर की ओर रवाना हो गये और मन्दिर की रक्षा की जिस का कुछ बयान " मेवाडराज्य का इतिहास " में पृष्ठ ८४२ पर इस तरह लिखा गया है—

" भीलों के उपद्रव से छे सात हजार भीलोंद्वारा ऋषभदेव का मन्दिर घेरे जाने का समाचार सुन कर महाराणा की सेना उधर गई, और सारे रास्ते में लडाई होती रही। "ऋषभदेव पहुंच कर श्यामलदासने भीलों को समझाने के लिये वहां के पुजारी खेमराज भण्डारी को उन के पास भेजा वगैराह. "

इस समय भी आफत का सामना था। लेकिन भील लोग तो यहां की मानतावाले हैं इस लिये आक्रमण करने तो नही आये होंगे लेकिन शरण में आये हों एसा अनुमान है; तथापि इतिहास जो कहता है उसी पर भरोसा करना पडेगा।

तीसरी आपत्ति जो संवत् १९८४ में उपस्थित हुई थी जिस का कुछ हाल लिखेंगे। बात यह थी के सम्वत् १९८४ वैशाख सुदि ५ शुक्रबार को ध्वजादण्ड चढाने का महुर्त था और तद् विषयक क्रियाकाण्ड जारी था। दरम्यान में वैशाख सुदि ३ बुधवार अक्षय तृतीया मुताबिक तारीख चार माह मई सन १९२७ ईस्वी का जिकर है कि बावन जिनालय में जो प्रतिमायें स्थापित हैं उन पर मुकुट, कुण्डल व आंगीया धारण कराने का काम हो रहा था। उस समय हमारे दिगम्बर भाई जो वहां उपस्थित थे उन्होंने मुकुट कुण्डल आदि चढानेवालों को मना किया। लेकिन यह अनुचित बात थी। जो व्यवहार पुरातन काल से चला आता है, जिस को दिगम्बर समाज भी करीब तीनसौ वर्ष से व डेडसौ साल से जारी होना मंजूर

करते हैं तो इस पहनावे में रोक करना उस समय हठधर्मी सा मालूम होता था। जब पहनावा जारी रहा तो कुछ दिगम्बर भाइयोंने आक्रमण कर मुकुट कुण्डल को छीन कर तोडने की ठान ली। एसी अनुचित कारवाई को देख उस समय मन्दिर की व सरकारी पूलिस जो पहरेपर थीं उन को मना किये और तोफान न हो, इस खयाल से हटा दिये। उस समय मन्दिर में आसपास के गांवों से आये हुवे कुछ दिगम्बर श्रावक मौजूद थे वह बाहर जाने लगे तो उन्हे भाई चन्दनमल (जिसे चांदमल भी कहते थे)–गृहपति दिगम्बर बोर्डीन्ग उदयपुरने रोका और हाथीयों के पासवाला जो द्वार है वहांपर एक किंवाड बन्ध कर दूसरे किंवाड की तर्फ हाथ फैला खडा हो गया और हठो मत मरजाओ की आवाजें करने लगा। इधर तो यह मामला था और बाहर आते ही किसीने ढोल की आवाज जारी करा दी। अक्सर छोटे गांवों में यह प्रथा है कि आपत्ति के समय वारी ढोल बजाया जाता है और उस आवाज याने बजाना इस तरह का होता है कि जो उस की आवाज सुनता है समझ जाता है कि कोई आपत्ति है। तुरन्त घटना स्थान पर पहुंच जाता है। इस तरह ढोल की आवाज से बहुत से मनुष्य जमा हो गये और अन्दर जाने लगे उस समय यह सारी भीड हाथीयों के पासवाले मन्दिर के द्वारपर भीतर के व बाहिर के हिस्से पर भी और जब ज्यादे मनुष्य अन्दर की सीढियों पर जमा हो गये और तिलभर भी हटना मुश-

किल हो गया था एसे समय में पुलिस पर भी हमला करने में कमी नहीं की थी। लेकिन न तो आनेवालों के पास कोइ लकडी या हथियार था और न पुलिस के पास कोई हथियार था अगर हथियार होता तो मामला अति भयङ्कर बनजाता। अब क्या होता है कि हठवादी मण्डल जिन्होंने तूफान किया उन को बाहर निकाले जा रहे थे और वह अपना हठवाद न छोडते थे। इधर से वारी ढोल की आवाज से जो मनुष्य जमा हो रहे थे वह मन्दिर में जाने लगे उस समय अन्दर व बाहर-वालों का सङ्गम हो गया। उस समय एक सिपाही पुलिस का और सात आदमी दूसरे कुल आठ आदमी नीचे गिर पडे। और बाहर आनेवाले लोग थे वह इन के उपर होते हुवे निकल गये। दुर्भाग्यवश अत्यन्त खेद के साथ लिखना पडता है कि आठ में से चार के प्राण वहीं पूरे हो गये और चार आदमीयों को हवा वगैराह उपचार से शांति पहुंची। जैनम-न्दिर में एसे उत्सव के समय इस तरह मृत्यु का होना हमारी समज में तो यह पहेला ही मौका है। हम प्रार्थना करते हैं कि उन चारों भाइयों की आत्मा को शांति पहुंचे।

इस उत्सव के मौके पर उदयपूर के श्रावक इने गिने ही थे क्यों कि इसी तिथी को तीर्थ करेडा में बावनजिनालय में प्रतिमा स्थापन व ध्वज दण्डारोहण का महूर्त था, और करेडा नजदीक है व बडा महोत्सव और उदयपुरनिवासियों में से कितनेक को तो प्रतिमा स्थापित व ध्वजदण्डारोहण निज के हाथ

से करने बाबत आज्ञा मिल चुकी थी। अतः सपरिवार यहां ज्यादे तायदाद में लोग जमा हो गये थे। इसी कारण तीर्थ केसरियाजी में ज्यादे मनुष्य श्वेताम्बर समाज के नही पहुंच सके।

इस प्रकार की इस आपत्ति के समय दैवस्थान हाकिम साहब श्रीदेवीलालजी व डिस्ट्रक्ट माजिष्ट्रेट साहब श्रीलक्ष्मन-सिंहजी भी मौजूद थे और आपने बहुत चतुराई के साथ मामले को शान्त किया। और इस सारी कथा की रिपोर्ट महकमे वाला में पेश की तो श्रीमान् हिन्दूकूलसूर्य महाराणा-धिराज फतेहसिंहजीने मामले की जांच करने के लिये पहले दरजे के माजिष्ट्रेट साहब डालचन्दजी व पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट और आसिस्टेन्ट सर्जन को घटनास्थल पर भेजे और पूरे तौर जाँच कराई गई।

इस तूफान के बाद चतुर्थी व पञ्चमी को किसी तरह की कोई बात पैदा नही हुई और ध्वजदण्डारोहण शांति से श्वेताम्बर समाज की ओर से चढाया गया; लेकिन निज के हठवाद के कारण प्राण आहुती देनेवालों का खेद तो दोनों समाज को असह्य है। हम उन की आत्मा को अंतःकरण से शांति चाहते हैं।

इस तरह की आपत्तियां इस तीर्थपर आती रही हैं लेकिन यहां के अधिष्ठायक रक्षक दैवने सब की रक्षा की और आयन्दा भी करते रहें एसी प्रार्थना है।

गुणानुवाद प्रकरण.

श्रीकेसरियानाथजी का तीर्थ श्वेताम्बरीय होने के बहूत से प्रमाण तो पहले बता चुके हैं लेकिन श्वेताम्बर समाज के धनिक श्रावक संघ निकाल कर इस तीर्थ की यात्रा करने आये हैं, जिस का वर्णन भी कई जगह मिलता है। और ज्यौं ज्यौं तलाश की जाय पता लगता रहेगा। हमने इस विषय में ज्यादे खोज नहीं की, तथापि जो जो प्रमाण हमें प्राप्त हुवे है उन को हम यहां बता देना चाहते हैं।

(१) सम्वत् १७४२ में आसपुरनिवासी शेठ भीमाजी पोरवाड संघ लेकर धूलेव में आये, और पूजन केसर चन्दन से की व कस्तुरी आदि का विलेपन किया और चम्पा–मोगरा–जाई–जूई–गुलाब के पुष्प धारण कराये और दोनो वख्त याने

सुबह–शाम आंगियां धारण कराई जिस का वर्णन " भीमचौ पाई " जिस के कर्त्ता भट्टारकजी महाराज कीर्त्तिसागरसूरिजी के शिष्य हैं, और आपने इस चौपाई की रचना सम्वत् १७४२ में की जिस की एक प्रत सम्वत् १७४९ की लिखी हुई इस समय "श्रीविजयधर्मलक्ष्मी ज्ञानमन्दिर" आगरा में मौजूद है। चौपाई तो बडी है लेकिन तीर्थ धूलेव में आये और पूजन अर्चन किया जिस के वर्णनवाला भाग इस विषय में उपयोगी मालूम होने से पाठकों के सामने रखते हैं सो आगे नम्बर एक में देख लेवें।

इस चौपाई में यह बात बतलाई गई है कि जिस समय सेठ भीमाजी पोरवाड आसपुर के रहनेवाले इस तीर्थ की यात्रा करने आये तब, और गांवों से भी यहां संघ आये हुवे थे। और सब श्वेताम्बर थे जिस कारण सब संघ–समुदाय को सेठ भीमाजीने भोजन कराया और इस तीर्थ पर ध्वजा चढाई एसा उल्लेख है।

(२) इस के बाद सम्वत् १८६८ की बनाई हुइ लावनी जिस में सदाशिवरावने इस तीर्थ पर आक्रमण किया जिस का बयान है। सो पहले के प्रकरण में बता चुके हैं और इसी हकीकत को और स्पष्ट करते मुनिराज श्रीदीपविजयजीने एक लावनी सम्वत् १८७९ में करीब ८० गाथा की बनाई जिस में भी सदाशिवरावने आक्रमण किया जिस का उल्लेख है और

इस तीर्थ का वर्णन भी है। लावनी तो बडी है अतः इस इतिहास में जो उपयोगी गाथा है सो देख लेवें।

(३) सम्वत् १८९० के वर्ष में एक पुस्तक लिखी गई जिस में सम्वत् १७७३ में छारेडा के भोजा कवि का बनाया हुवा स्तवन छपा है सो भी जानने योग्य है सो नम्बर तीन में देखें।

(४) इस के बाद या समकाल में ही मुनिराज श्रीगुणसुन्दरजीने श्रीकेसरियानाथ का अष्टक बनाया सो हम नम्बर चार में बतावेंगे।

(५) श्रीमान् हीरविजयसूरिजी महाराज के समय में एक स्तवन बना है जिस में अकबर बादशाह का व सूरिजी महाराज का नाम दिया है। अतः तीर्थों के पट्टेवाला वर्णन भी इस से और स्पष्ट होता है, और श्रीकेसरियानाथजी की स्तुति करते सूरिजी महाराज और बादशाह को भी रचना करनेवालेने याद किया है।

(६) सम्वत् १७९७ में श्रीमान् भोजसागरजी महाराजने इस तीर्थ की महिमा का एक स्तवन बनाया सो भी जानने योग्य है।

(७) मूलचन्दजीने एक छंद बनाया जिस में भी बहुतसा वर्णन है।

(८) सम्वत् १८६० में रोडजी गुरजी सलूम्बर (मेवाड)-

निवासीने एक स्तवन बनाया जिस में भी मन्दिर का बयान व विधीविधान का जिकर है ।

(९) सम्वत् १८९९ में इडरगढ का संघ आया तब मुनि महाराज रुपविजयजीने एक लावनी बनाई, जिस में बावन जिनालय व मरुदेवीजी के हाथी का बयान है ।

(१०) इसी अरसे में नाथूराम कविने एक लावनी बनाई जिस में पूजन का व आंगी वगैराह का बयान है, और अकबर बादशाह चढ कर आया जिस का भी उल्लेख है ।

उपर बताये अनुसार लावनी, स्तवन, छंद देखने से भी श्वेताम्बरीय विधान का पता चलता है ।

---

(१)

हवे संग मारग चालतां, पुंहता पुर धुलेव ॥
मनमां उलट उपनो, जय मेघा जिनदेव ॥ ६९ ॥

॥ ढाल काफी धमालीनी ॥

संग तिहां आवी उतर्यो हो डेरा दीधा चंग ॥
केसर चंदण घोलत रोलत, पूजत ऋषभ जिणंद ॥ ७० ॥
मनमोहन ऋषभजी भेटइंहो, केसर चंदण चंपक सबही ॥
मृगमद केरी पास मरुवो, मचकुंद मोगरो हो चंपकली
लाल गुलाल ॥ ७१ ॥ आकणी ॥

विविध प्रकारना. फूल लेइने, पूज्यो प्रथम जिनन्द ॥
पूज्यां पातक सवि टले हो वली, होय तस घर आणंद ॥७२॥
अहनिस सुर सेव करे, हो अणहुती एक कोड ॥
गुण गावे प्रभुतणां हो, राय राणां दोय कर जोड ॥७३॥
भीमसाह मनभावसुं हो, पूजा रचे उदार ॥
चाल्या परवारसुं पूजवा हो, उलट अंग न माय ॥ ७४ ॥
करीअ पखाल सोहामणो हो, आंगी रची उदार ॥
देखंता सुर नर मन मोहे, पुनि भरी सुकृत भंडार ॥ ७५ ॥
प्रभुजीने पूजी भावसुं हो, आव्या मंडप आप ॥
सहगुरु पाय प्रणमी करी हो, करी धजा चडावारो थाप ॥७६॥
सहु संघ मिली करी हो, देइ परदषणा सार ॥
धजा चढावी देहरे हो, वरते तब जय जयकार ॥ ७७ ॥
ऋषभ जिनेसर पूजा करीने, अंगी रची उदार ॥
उलस उलस सहुं परवारसुं पूतां, सुहो पूजन सहु परवार ॥७८॥

॥ दोहा ॥

भोगी भमर ए भमडो, चतुर विद्यानो गेह ॥
भगवंत पूजी भावसुं, निरमल कीधी देह ॥ ७९ ॥
देव जूहारी देहरें, आव्या मंडप नाम ॥
संग नुहतरी सुभ परे, तली नुंतरी गाम ॥ ८० ॥
देस देसना संघ मिली, आव्या भगवंत जात्र ॥
ते सहु को जीमाडने, पोषे वा पुन पात्र ॥ ८१ ॥

भीम पुरंदर मोटो साहजीरे, आसपुर नगर सुवास ॥
चतुर जोडा वि रुडी चोपइरे, कीधो उत्तम काम ॥ ८२ ॥

सकल भट्टारक पुरंदर, सिरोमणि श्रीकीर्तिसागर ॥
सुरंद तत् शिष्ये जोडी चोपइरे पुजपर नगर मझार ॥ ७६ ॥

॥दान॥ संवत सत्तर बयतालीस में रे, चैत्री पुन्यम सुखकार ॥
जे नर भणे गुणे ने सांभलेरे, तस घर जय जयकार ॥ ७७ ॥

(२)

॥ २ ॥ खडगदेश में नगर धुलेव जास ददामा घुरता है ।
॥६॥ फिर बागड देश बडौद नगर में जगपर प्रभु करुना कीनी
॥ गाम धुलेव वंशजाल में गुप्त रहे हैं प्रभु धरनी
॥ संवत अढार में भाउ सदाशिवराव
॥ नाथ धुलेवे कीरत सुन के, देश देश नृप आवत हैं ।
केशर में गरकाव रहते, केसरनाथ कहावत है ॥ १ ॥
॥४॥ हिन्दुपति पादशाह उदेपुर, भीमसिंह के राजन में ॥
एह लावनी खुब बनाई, सकल संघ साजन में ॥ ९ ॥
संवत अढार पंचोत्तर वर्षे, फागण सुदि तेरस दिवसे ॥
मंगल के दिन दीपविजय कुं, दरशन परसन दो ऊलसे

॥ रत्नसागर ॥

---

(३)

॥ श्री आदिनाथजी को स्तवन ॥

चालो आदि जिनंदजी को पूजवा, जिठै सामलियो जिनराज रीखभजी ॥ चालो आदि जिनंद पूजवा ॥ मैंतो पूजांला मन वच काय रीखभजी ॥ १ ॥ प्रभु विकट पहारां निराजिया, जिठै सांवरियो महाराज, रुषभ जिनजी चालो आदि जिनंदजी ने पूजवा ॥ २ ॥ प्रभु ओड पास देहरां चण्या ॥ जिठै बिच बिराजे आप ॥ ऋषभ जिनजी चालो आदि जिनंदजीने पूजवा ॥ ३ ॥ प्रभू हस्ती तोही दै बारणां, जिठै नइठी मोरादेवी माय ॥ ऋषभ जिनजी ॥ ४ ॥ प्रभु केशर घीस्या ज्युं भावस्युं, मैंतो चरचालां प्रभुजीरो गात ॥ ऋषभ ॥ ५ ॥ प्रभु वागो तो सोहे थाने केसरयां, जीमें सोनारा फुल जडाव ॥ ऋषभजी ॥ ६ ॥ प्रभु सिंघासन थांको हद बन्यो, जीमें चोवीसीरो भाव ॥ ऋषभ ॥ ७ ॥ प्रभु छतरी तो थांकी हद बनी, जिमें गिरनारांरो भाव ॥ ऋषभ ॥ ८ ॥ प्रभु संघ आवे चिहुं देस से, जाका मनमांही हरक उच्छाहं ॥ ऋषभ ॥ ९ ॥ प्रभु धुलौजीगढ सोहामणो । तामें देस बडो मेवाड ॥ ऋषभ ॥ १० ॥ प्रभुजी नरनारी जो गावसी, सोतो जासे मुक्ति मोझार ॥ ऋषभ ॥ ११ ॥ प्रभु सतरसें संवत तीओतरी, प्रभु भादव सुदी चवदसीं जाणी ॥ ऋषभ ॥ १२ ॥ प्रभु भोजोजी भावस्युं विनवे ॥ वोतो रहे छे छारेडारे बीज ॥ ऋषभ ॥ १३ ॥

(४)

॥ अथ आदिनाथजी का अष्टक लिख्यते ॥

प्रमोद रंग कारणी, कलारव धारणी, महातमीय हारिणी, सु ज्योतिरूप भारती ॥ त्रैलाक्य मध्य राजती, सुज्ञान बुद्धि छाजती, सुभ्रात को निवाजती, दुरत दुख वारती, नमांमि मात सर्वदा, ददाति सुख संपदा, सौ वंदियौ गौतम सदा, देवाधिदेव गाइयै, ताध्यायि रिद्धि पाइयै, विशुद्धभाव आनिके, सो मुगति हेत जानिकै, धूलेवगांव खडुदेस आदिदैव ध्याइये, जु आदिदैव ध्याइये, जु आदिदैव ध्याइये. ॥ १ ॥ नाभीराय नंदनौ, दुरित कंद कंदनौ, सुकोट पाल छंदनौ, आनंदनो सुवंदनौ, इक्ष्वाक वंश मंडणौ, कंदर्प दर्प खंडनौ, वीलोल चित फंदनौ, सुकाम राग वारिणौ, सुभव्यजीव तारिणौ, विस्तारणो सुतीत रीत, प्रीतसुं आराहिए ॥ विशुद्ध ॥ २ ॥ प्रशांत रूप रणौ, कृतांत काल मारणौ, पाखंड मत गंजनौ, निरंजनौ सुरंजनौ, समग्रास पूरतौ, प्रताप तेज सोरतो, जगत्रमें सराहियें ॥ विशुद्ध ॥ ३ ॥ छतीस पूण जेहनी, करंत सेव तेहनी, पूरंत आस मेहनी, मीलंत सुत गेहनी, सराज राजवी थरागवंद, बाज सुंदरा लहंत, ते मनोहरा, ज्यों वृष्टि शब्द मेहनी, नीसंत याद व्याधनी, लहंत ते समाधनी, अगाध बोध लाघनी, न गर्भवास आइयै ॥ विशुद्ध ॥ ॥४॥ कृपाल तुं दयाल है, तुं भक्तिप्रतिपाल है, तो बिना गोपाललाल औरतो जंजाल है, तुं विचित्र रूप है, तुं सर्व लोक भूप है, तुं सर्वथा अनूप है, तुं मोह काम को कुदाल है, तुं

जुगादि देव देव है, तुं सर्व देव सेव है, अनाथ नाथ सामीजी के चरणां चित ल्याइयै ॥ विशुद्ध ॥ ५ ॥ तुंम ज्ञान के निधान है, तुं हीन दीन त्राण है, तुं हेममान भग्न है, सुजानतौ प्रधान है, अरियन कौ मृदान है, जो तुं बीराजमान है, प्रमाण आण बाहरी तौ नामतौ कल्याण है, तुं सुख को निवास है, तुं ज्योति को प्रकाश है, तुं मोह पास, द्रढ बंध तोहितैं मिटाइयै ॥विशुद्ध ॥ ६ ॥ पवीत कीत कारणौ, समंदनंद आरणौ, ज्योती नी रूप धारणौ, विरह अमीजरौ, सुदेश देश धारकौ, निरेस लोक वृंद, आवइं तु देव जानि कैषरौ, कस्तुरी का कपूर चूर, भूरि भावसुं भविक, पूजाय नाथजी के भावना सुभाइयै ॥ विशुद्ध ॥ ७ ॥ तुं आन देव साधमान, देव कौन तौ समान, कोट काम तो परै, जुवारी वारी डारियै, तीनेश भ्रम भांजिये, गुण सुरंद नाभि निरंद के, जिनंद के पादारवंद्य, वंदतां सुरिद्धि सिद्धि पाइयै, विशुद्ध भाव आनि के मुगति हेत जानी कै, धूलेवगांव खग्गदेश, आदिदैव ध्याइयै जुगादीदेव ध्याइयै ॥ ८ ॥ इति श्री आदीनाथ अष्टक संपूर्ण ॥

(९)

२ सारीकर २ श्रीऋषभ केशरिया तुझ समो अवर न देव कोई, रयण चिंतामणी सरुतरु तुं धणी कामकुंभ कामगवी नयण जोई ॥ सा० २० टेक ॥ धन्य नाभीरायनो कुलकमल दिवाकरु. मात मरुदेवीनो नंद नीको, आज कलोकालमां सांच रयणायरु, जाच हीरो त्रिभुवन टीको ॥ सा० ॥ १ ॥ सकल

देसांसरे, खडग देशावरे नगर धूलेवमां तखत राजे, झगमग ज्योत थी ज उद्योतथी जगत्रना तातनी सोभा छाजे ॥सा०॥२॥ भरीय कचोलडां, धन सारजे रुवडां, केसरां तणां तिहां कीच माचे, धूप धूमां धगे, दीपक जोत्य फगें, फुल टोडरतणां सुगंध आचें ॥ सा० ॥ ३ ॥ नोबत गडगडे, शब्द गयणे अडे, तालक साल विशाल बाजें, आरती चिहूं गती वारती सारती धारती भव्यने मोक्ष राजे ॥ सा० ॥ ४ ॥ भवि मन जे धरे, प्रभु नामथी सुख वरे, पुत्र लच्छी घेरे धन्य कोटी, रोग ने सोग ज्वर दुख दूरे भय हरे, दरसने पुरवे आस मोटी ॥ सा० ॥५॥ विषम घाटा घणां, पाहण पाणीतणा, खाखरां भाखरां भीत लागे, चोर धाडा फरे, वाघ सिंह तहां चरे, नाथना नामथी दूर भागे ॥ सा० ॥ ६ ॥ दूरथी आवियो मुझ मन भावीयो, धाइयो तुं प्रभु चित्त मांहे, आजथी काज जिनराज सवि सिधलां, तारीये तारक ग्रहीय बांहे ॥ सा०॥७॥ ऋषभ राजातणां गुण अनंता घणां, नही मणां सांचथी सहू अरावें, गच्छपति हीरनां, दक्षीपत सिरनां जैन धर्म पामियो तेह सांचे ॥ सा० ॥ ॥ ८ ॥ विबुध चूडामणी, किरती जस घणी, अमर केसर दोय भ्रात जोडी, खुशाल कपूरविजय शिष्य प्रभुने भजे, रूप प्रणमे, सदा हाथ जोडी ॥ सा० ॥ ९ ॥ छंद संपूर्ण ॥

(६)

नाभी नृपति कुल कमल दिवाकर मरुदेवा उर हंस जनम-पुरी वनीता भली, धन धन प्रभु इक्ष्याग वंश ॥१॥ साहिबजी

रीषभ जिणंदावे, अरेहां सोभागी ग्यान दिणंदावें, विषम पंथ वन गहन सघन तरु गिरवर अनड पहाड निझरणां नदीयां वहे झंगि वली बहुला झाड ॥ सा० ॥ २ ॥ खग्गदेश देशां अति उत्तम, नगर धुलेव विख्यात ॥ तिहां देवल प्रभुजीतणो, सोहे शशि जिम अवदात ॥ ३ ॥ शत्रुंजे गिरनार संखेश्वर, अरबुद सम्मैत वैभार ॥ तिम तिरथ महिमा निलो, धुलेवे ऋषभ जुहार ॥ ४ ॥ देशना संघ अहोनिश, जुगते आवे जात्र ॥ केशर अगर कपूर सों, चंदन मिल चरचागात ॥ ५ ॥ धूप दीप नैवैद्य कुसुमवर, आरती मंगल दीप ॥ भावना भावे भावसों, सुहव सिणगार समीप ॥ ६ ॥ भांत भांतना परिघल भोजन, साहमी वच्छल सार ॥ दान समायै दोलती जाचक, बोले जय जयकार ॥ ७ ॥ उसवंश सिणगार हिरणनवः साहलालनो पुत्र ॥ प्र तपो जीवो संघवी, धन धन जस जनम पवित्र ॥ ८ ॥ मात मुरा-देवीनो नंदन, बहु जस रूपदे कंत ॥ जसनामी जीवो हिरण, जिण पुरी जात्र नीषंत ॥ ९ ॥ उदीयापुरथी जिण संघ किधो भेटीया रिषभ जिणंद ॥ धन खरची बहु जस लीधो, नाम राख्यो जा रविचंद ॥ १० ॥ संवत् सत्तरसें सत्ताणुवे, सुदी पंचमी मृग मास ॥ जात्र करी जिणवर तणी, पुगी सब मनरी आस ॥ ११ ॥ तपगच्छमंडण सकल विबुधवर, विनीतसागर गुरु सीस ॥ वाचक भोजसागरतणी, सफली भइ मनरी जगीस ॥ १२ ॥ इति ॥

(७)

॥६६०॥ श्री गुरुभ्यो नमः श्री परमात्मा श्री ऋषभदेवस्वामी नमः ।

दोहो.

सकल मनोरथ पुरणो, जपतां श्री जिनराज ॥
धींग धणी धूलेवनो, सो परतिष्य परचो आज ॥ १ ॥

आगे तो सूणी इसिः, वस्या एवंति वासिः ॥
लाया था राघव लंकसूः, आदी जोनपुरी आस ॥ २ ॥

थिर थानिक तिहां भाळीया, एवंति आदि जिनेंद ॥
प्रथम नाथ एसो प्रगट, सेवे सूरनर इंद ॥ ३ ॥

भविक जीव संकट हरे, सो मयणा दीधी मान ॥
रोग टली संपत मली, कीधो राव श्रीपाल ॥ ४ ॥

वड पाटणे बडोदरे, राघव हुवो तिहां रोग ॥
सुपनंतर संपतियां, दूर गयो भय सोग ॥ ५ ॥

चरण धरण कर चालतो, आयो आवति इह ॥
नमण करी करुणा नीधी, सो दीये कंचन देह ॥ ६ ॥

अवर मूरती थापी तिहां, आदि जिन लायो आप ॥
त्रिहुं काल पूजा करे, सो जपे निरंतर जाप ॥ ७ ॥

छंद मोतीदाम.

जपे जिनराजतणो जेह जाप, परंत सोइं दुरित पाप,
नाभिराय नंदतणो वड नाम, वरागर देश बडोदो हो गाम ॥१॥

केसरियानाथ कहे सब कोय, हरे रोग सोग सबे सुख होय ॥
घणां लास संघ आवे घमसान, बडाला ताशतणां ए वखाण ।२।
अवनिय आप मनावी आण, जुगादिनाथ हुवा जगजाण ॥
हुवो अशपूत दलिसर हेक, एसो ना होडरो अइला पर एक ।३।
डोगरो नाम दिस्यो दिगपाल, भयंकर कंपे है तास भूपाल ॥
पिगम्बर हाथ चोराशिय पिर, मंडे जिहां युद्ध धसे कररी ॥४॥
मुगला साथ बडा विकराल, मलेछां छाक छुरा मधराल ॥
करेय कटकाई धरे मन कोप, लडे हैदुआण लीआ बहु लोल ॥५॥
मंडे महाराज तज के परसाद, अस्या अशराण हूआ उन्माद ॥
देवांरा थानक कीदां दूर, हरिहर आया आद हजूर ॥ ६ ॥

जाहे सग भय हरे रीस हस मयो भणीय दिनमुख वयण, सुरन्दो भवत्रय गई बली जंतो पढम जीणं पयपंकज स सरण ? छप्प खरो ससला सूरा उपरां, मुगलां कोपियो उलां भलां, सूरां-बल खाला कीया खंड ल्लल्लल्ल लके शेन द्विद्वे मचावंतो मही धाक पावाड हाक मोडंतो भ्रमडं असुरा मेवाडे आयो दाणा वारा देश पाडे, उछाले पछाडे देवा हेदु कीधा हार शंकरा जाम-शाही, ताछ कवरा चक्रधरा भ्रमाण भेखां भणे धुलेवा आधार, शरण आया शामला बाहर कीजे, नामीवाला देवा भजें, ऋषभजी उघाडीजे, आय मछे छाण मुजलांण केसरिया, चढीयो काल विकराल जगजाल गड्डडड गाज हडडडड हुइ हाक धडडड धुजे धरा धडड पडड धायो द्विने धंगधारा कडे चडे तडे पडे लडे भडे आरा नडे मूले भणे महाराज कियो जग जयकार ॥ चाल

मोतीदाम ॥ शरणे राख्या ते सुमत कियो जेह जुद्ध घणो ते शक्र दलरोदल भाख्यो तांही पोकार, जीप्या पादशाह हुवो जयकार, दयानिधि त्यांही देव के धरमी आव्या नयर धूलेव माणा भेरवनाथ तब रोशे भराणा !

॥ दोहा ॥

भला भजाणी भेरवा, प्रजारा प्रतिपाल ।
साम धर्म सामी तणा, कासीरा कोटवाल ॥ १ ॥

उर तप धारा तेडवा, तारक त्रिभुवननाथ ॥
आगल जई उडा रह्या, हेते जोडी हाथ ॥ २ ॥

राज करी ऋषभ धणी, वली थाय वतिराग ॥
धगल प्रल हण धारशी, लेव धणी री धाक ॥ ३ ॥

हार वायरीण तिह तणां, ते तारी सारीइ झरीजनने ।
धोसी ससरण उगारइ, आदसेर अरिहंत अरज अवधारइ।४।

॥ दोहा ॥

सेवकने संकट पडे, वेलां हुइ विषम तीणी ॥
वेराई वारे चढ्यो, उसमा धणी ऋषभ ॥ १ ॥

परावस पुसालरी, प्रभुइ सुणी पोकार ॥
नीलु पलाणीयो, आप हुवा असवार ॥ २ ॥

बीजे ऊरीइगो मुखजी, बैठा दोय असवार सरी जगदीठा ॥
भैरव तप धस्या बहु सीला, हठकर चढीया सवे हठीला ॥३॥

अनेक देव आगे हुवा, वाग अरु विकराल ॥
गोडा उट भडके घणां, कंपे देषी (खी) काल ॥ ४ ॥

तोप वहेल ताणे नही, अटकी भोम अथाह ॥
भील भांखर देव भेरवा, रोकी चहुं दीसे राह ॥ ५ ॥

सर्व चोरो की राह अथग, अथाह तो पामर आय के ॥
के पुवहेडे सदा सिवराम, कहे मत जाय देषे (खे) ॥ ६ ॥

कुण दाय कहा लडे हे, जिसे गड कोट चलावहे वोट ॥
दीइ दड दोट जाते चढे, हे जाइ कहा आरसे ॥ ७ ॥

कुण ठोर जसवंत जोड कहे कर रहे वेग न लागी वार, वीयायो तीहा आयो, धणी फरके नेजाकार, चलके चिहुं दीसे मालडा पुडे पडे प्ररहार, दोडे आगे दुसमनाइ बे बडाधार, एवुं अनेका आंतरे रधायोरे धणी, धुलेव सेवकांरी अरदास सुणो, आवो प्रभु दया आणी, उगारीयो कुसालने ठारी, अपाजीयां गाच बंदी छोड महाराज तोपां पडी, रहे तहे कंपु कियो काल जंजाल, जंबुरा घटे तेहगा धणी गणा त्रुटे, एवुं मील नही छुटे लुटे असुराण नागराव आगल जाइ भीलडांरा, भालडा षाइ हाथी, अहणाणो जाइ देखडेज मराण नगारा नीसाण ढोल सोनारा पलाण सार घोडा वाडी जाइ दोडी देवा दरबार पाथडा. पाथडे तहे अणलहे, हे फरंगाण मुगलांण पालारोनदे पार थाव भुसराणली नदी जाडी गुफ जाल भागा जाइ ठाला माला वहे उण वाट केते घरे झाडां हाथ घाले त्रण मुख साथ उभा थइ खेडझाडा नागडा नडाट कवण ए धोला कालां भखां

जे मालावाला केसर वागा छोडावाला वहे असवार घणे थां न लीदी लाज करणो पड्यो एह काज दीठो नहे कामदेव हाथारो अजार माषमा सहुको करे तसणे को हाड धरे कीडी पर कटकाइ, जगारा आधार इन्द्र चन्द्र सुरअवि सोनारे फुले वधावे गुणी जण मुलो गवि जपे जय जयकारज कलस जपे जीन जयकार थइ थीर सासन सोभा दीयो दीवाण धार धीर अल थानक थोभा आसोवद एकम आ साल त्रेसठ आव्यो जुध जीतया जीनराज ऋषभजी बदुसाकयो राषयो आवी बेठा आसने घुरे नीसाण कसर घणां मयारामसुत मुलो भणे जपे त्रिहुं लोक नाभीतणां ॥ इति श्रीधुलेव श्रीऋषभदेव छंद संपूर्ण ।

(८)

नित्य क्रिया प्रतिक्रमण जो प्रातःकाल में किया जाता है उस में तीर्थों को नमस्कार करने के लिये तीर्थमाला बोली जाती है । और उस में दैवलोक, तीर्छालोक के तीर्थों को नमस्कार करने बाद मनुष्यलोक के कुछ तीर्थों को नमस्कार करने में श्रीकेसरियाजी तीर्थ का भी नाम आता है, जिस का उल्लेख इस प्रकार है ।

संखेश्वर केसरियो सार, तारंगे श्रीअजित जुहार ॥
अंतरीक्ष वरकाणो पास, जीरावलो ने थम्भण पास ॥

इसतीर्थवन्दना को बनाये कितने साल हुवे इस का प्रमाण मेरे देखने में नही आया किन्तु सुना है कि करीब तीन

सौ वर्ष पहले की बनी हुई है, जो नित्याऽनुष्ठान में बोली जाती है।

लावनी.

रिखबदेव तो बडे देव हे, जिन की शोभा अती भारी ॥
धूलेव नगर में आप बिराजे, आदिनाथ प्रभु अधिकारी ॥आंकणी॥
सरसती माता सूमतकी दाता, तुंही विधाता त्रीपुरारी ॥
अकल बुध तुम देवो इश्वरी, कहुं लावनी हद प्यारी ॥ २ ॥
अनड परवतां अनड पहाडां, जगां घणी हे अती भारी ॥
देस प्रदेसी आवे जातरी, सांवली सूरत पर बलिहारी ॥ ३ ॥
नाभीराय कुल भाण प्रगट हे, मोरादेवी का तुम नंदा ॥
तिलक भाल सिर छत्र बिराजे, मुख हे सरद पुनम चंदा ॥ ४ ॥
काने कुंडल सिर छत्र बिराजे, बांहे बेरखा हद सोहे ॥
सांवरी सुरत हद मुरत बिराजे, सब संतन का मन मोहे ॥ ५ ॥
आंगी अजब बनी प्रभुजी की, कुंडल की छबी हे न्यारी ॥
गले मोतीयन को हार बिराजे, सुंदर मुरत हद प्यारी ॥ ६ ॥
समरण करता प्राछीत जावे, दरसण से दिल होवे राजी ॥
रोग सोग सब जाय भाज कर, गल जावे दुसमण पाजी ॥७॥
चार खंड में नाम तुम्हारा, ध्यान धरे सब मुनि वंदा ॥
राव राणा सब आय नमें हे, करे सबन कुं पावंदा ॥ ८ ॥
अनंत काल पें करें वीनति, जिन का कारज तुम सारो ॥
वाट घाट में तुम कुं ध्यावे, जीन का कारज तुम सारो ॥ ९ ॥

पंगत्या चढतां प्रायछित जावे, दरसणमें दिल होय राजी ॥
रोग दोष सब जाय भाज के, गल जावे सब दुसमण पाजी ॥१०॥

अगडंब अगडंब बाजे नोबतां, झणण झणण झालर बाजे ॥
कीकडतां कीकडतां ताज झांझकर, धणणण धणणण घुघर बाजे॥११॥

सीस भाल सिर छत्र बिराजे, ओर झलकत हे हीरकणी ॥
चामर छत्र सिर उपर ढुलत हे, प्रभुजी की शोभा अजब बनी ॥१२॥

सुरग मृत्यु पाताललोकमें, सुरग लोकमें तुम चंदा ॥
सब देवन में आप बडा हो, आदिनाथ प्रभु आणंदा ॥ १३ ॥

देवल तो मजबूत बन्या हे, उपर इंडा सोनेका ॥
ओलुं दोलुं कोट बनाया, सब सीगींद बंद चुनेका ॥ १४ ॥

सन्मुख हस्ती एक पटाजर, तीन की शोभा अब केहता ॥
रिखबदेव की मातपिता दोइ, ऐरावत उपर बेठा ॥ १५ ॥

दोनु बाजु हस्ती घुमे, जीनकुं ऐसे सिणगारे ॥
कंठ चरण और घुघर घमके, लागत हे सुंदर प्यारे ॥ १६ ॥

एक बात तो अजब तुमारी, हुं जाणुं तुं धन काला ॥
तेरा नाम से कटे बेडियां, और कटे लोह का ताला ॥ १७ ॥

मन सुध करके समरण करता, एक चित्त तुमकुं ध्यावे ॥
अन धन और माणक मोती, पुत्र कला लछमी पावे ॥ १८ ॥

भवसागर में आप तरे प्रभु, अब सेवगकुं तुम तारो ॥
मायाजाल में लिपट रह्यो छुं, जीनसुं न हमिरो सारो ॥ १९ ॥

अष्ट करम दल घेर रह्यो छे, जिनसुं समरण नही बनता ॥
भव भव प्रभुजी सेवा दीजो, तुम साहेबने हम बंदा ॥ २० ॥

में तो प्रभुजी सेवग तारा, किरपा कीजो रिषभजी ॥
मेरे आसरो एक तुमारो, तुम दरसण में हम राजी ॥ २१ ॥

अदकी ओपमा तुमकुं सोहे, कहेतां कछु पार न पावे ॥
नरभव पाय तुज नही ध्यावे, जे नर दुरगत कुं जावे ॥ २२ ॥

कहत लावनी रोडा गुरजी, अरज सुणो प्रभुजी मोरी ॥
चोरासी की दुरगति टालो, ओर टालो भवकी फेरी ॥ २३ ॥

समत १८ साठ वरसे, माही पुनम गुरुवारे ॥
कही लावनी अल्प बुधसुं, सहेर सलुंबर मांहे प्यारे ॥ २४ ॥

इति श्रीऋषभदेवजीरी लावणी संपूर्णम्

(९)

खड़ा खडा प्रभु अरज करंता, समरण करता सब तोरी ।
दीनानाथ मोरी अरजी सुन कर,भवकी टालो तुम फेरी॥ए आंकणी
विनीता नगरी में तोरा जन्म है, माता तोरी मरुदेवा ।
चोसठ इंद्र तोरी करे चाकरी, चंद्र सूर्य करता सेवा ॥
नाभीराय के कुलमें सोहे, ऋषभदेवजी नाम तोरी ॥ १ ॥
धुलेवा नगर तेरा खुब बना है, वहां है देवल जिनवर का ।
फीरती बावन डेहरी सोहे, हस्ती खडा मरुदेवी का ॥
दोनुं हाथी जुले गोखा, दरवाजे प्राकुम भारी ॥ २ ॥

आंगी तेरी खुब बनी है, बुटी सोभे जडावन की ।
गले मोतीन को हार बिराजे, शोभा दीसे कुंडल की ॥
चमरी तोरे उडे सीरपर, रीषभदेव की बलिहारी ॥ ३ ॥

ठमक ठमक तोरो मादल जमके, झणण झणण नाद झालरका ।
घनन घनन तोरा घंटा बाजे, डंका बाजे नोबत का ॥
समीसांज की होवे आरती, मंडप मांहे भीड भारी ॥ ४ ॥

नीत नीत तोरी आंगी सोहे, मुगट की गत हे न्यारी ॥
सीर पर तोरे छत्र बिराजे, सामली सुरत दीसे प्यारी ॥
एक दीन में त्रण रुपज होता, देखत है सब नरनारी ॥ ५ ॥

चार खंड में नामज तोरा, संघ आवे सब देसन का ।
छत्रीस खावींद आणा माने, तुम समरण अरिहंतो का ॥
सर्ग लोक पाताल लोक में, मृतलोक माने भारी ॥ ६ ॥

रीषभदेव का दर्शन करता, पाप जावे भवोभव का ।
समरण करता बेडी भांगे, बंध टूटे सब कर्मों का ॥
भीलडा तोरी आणज माने, एसो परतो है भारी ॥ ७ ॥

संवत अढार ओगणसाठ, आसाढ सुद बीजे दिन बुधवारी ॥
इडरगड का संगज आया, जात्रा करे सब नरनारी ॥
मानता तोरी सहुको माने, एसो परतो हे भारी ॥ ८ ॥

दरीसन करता जोडी लावणी, सुनलो उन का ठीकाना ।
राव मलार का कडी परगणा, गाम ऊन का मेसाणा ॥
रूपविजयजी सेवक तमारो, सुन ल्यो प्रभु अरज मेरी ॥ ९ ॥

मेवाड राज्य और जैन समाज.

मेवाड देश किसी समय जैनत्त्व से सम्पूर्ण सुशोभित था और इस की कीर्त्ति का सूर्य प्रकाशमान होकर सर्वत्र प्रकाशित किरणें फेंक रहा था, और इस जैन धर्म की महिमा आकाश तक पहुंच चूकी थी, जिस के कारण राजा–प्रजा में जय जय कार ध्वनि की गुञ्जारव सारे देश में होती थी। उस ही की यादगार में आज देखते हैं तो गांव गांव में और जंङ्गल–वनखन्ड–पहाड–पर्वतों में जैन मन्दिर आबाद और जीर्ण व खंडियेर हालत में सैंकडों की तायदाद पर नजर आते हैं। जैन धर्म का इतना प्रकाश मेवाड देश में होने के दो कारण हमारी समझ में आते हैं। अव्वल तो राजकुटम्ब के महाराणाधिराजने जैन धर्म को खूब अपनाया, समय समय पर सहायता पहुंचाई और जैन धर्माचार्यों को व जैन धर्म को उच्च द्रष्टि से देखा। दोयम मेवाड देश के राज्य कारभारी–दीवान–मंत्री बहुधा जैन धर्मी ही रहे, जिन को लक्ष्मी प्रसन्न और धनसम्पत्ति विपुल पाने के कारण जैसी के चाहिये थी

उन्नति करपाये। और उस समय सारी प्रजा राजभक्त जिस में भी जैन प्रजा तो सम्पूर्ण राजभक्त थी, और लोग सुखी अवस्था में अपना अपना धर्म–कर्म साध्य करते थे और धर्म में किसी को भी किसी प्रकार का विक्षेप नहीं होता था।

राज्यकृपा का वर्णन कहां तक करें ? अतुल कृपा और समय समय पर सहायता के उदाहरण इतिवृत्तों में सैंकडो प्राप्त हो सकते हैं। जिस में भी महाराणा लाखाजी, महाराणा हम्मीरसिंहजी, महाराणा मोकलजी, महाराणा कुम्भाजी, महाराणा प्रतापसिंहजी और महाराणा राजसिंहजी की नीतिमय राजधानी में तो जैन समाज का सितारा पूरी चमक बता रहा था; और उपयुक्त महाराणाओं के समय व बाद में भी इस राज्य में अमात्य–प्रधानवर्ग बहुत करके जैनी ही नियत हुवे हैं, जिन के उदाहरण इतिहासों से सम्पादन हो सकते हैं। और मेवाडराज्य की कृपा किस प्रकार रही जिस की कुछ झांकी हम यहां बताना चाहते हैं सो देखिये।

विक्रम सम्वत् १४९० में मेवाड का मुख्य मंत्री रामदेव और चुण्ड था, जिन के आग्रह से जैनाचार्य श्री सोमसुन्दरसूरिजीने मेवाड देश में बहुत विहार किया और उसी जमाने में नीम्ब श्रावक के खर्च से देवकुलपाटक (हाल में देलवाडा) में श्रीभुवनवाचकजी उपाध्याय को आचार्यपद दिया गया। इसी तरह महाराणा लाखाजी का विश्वासी श्रावक वीसलदेवने विक्रम सम्वत् १४३९ में श्री श्रेयांसनाथ भगवान के मन्दिर की प्रतिष्ठा

कराई, और सम्वत् १४४४ में श्री जिनराजसूरिजी महाराजने श्री आदिनाथ बिंब की प्रतिष्ठा कराई, और सम्वत् १४८९ में आचार्य श्री सोमसुन्दरसूरिजीने तो बहुत जगह प्रतिष्ठा कराई। इसी तरह महाराणा मोकलजी जिन के मुख्य मंत्री सयणपालजीने बहुत धन खर्च कर के जैनमन्दिर बनवाये और इन के बाद महाराणा कुम्भाजी के जमाने में तो बहुत से मन्दिर बनवाये गये। और सुना जाता है कि उस समय नागदे में साडेतीन सौ झालर बजती थी। नागदे में इस समय मन्दिरों के खंडियेर तो बहुत दीखते हैं, जिन में बावन जिनालयवाले भी जीर्ण हालत में इस समय मोजूद हैं। यहां पर एक मन्दिर जिस का नाम "अदबदजी का मन्दिर" है अब तक आबाद हालत में मौजूद है, जिस में श्री शांतिनाथ भगवान की प्रतिमा सात फूट उंची भव्य आकृतिवाली स्थापित है। जिस की महाराणा कुम्भाजी के जमाने में सम्वत् १४९४ में महा शुदि ११ गुरुवार को ओसवंशीय लक्ष्मीधर सेठ व इन के पुत्रोंने प्रतिष्ठा कराई सो अब तक ठीक हालत में है। इस के बाद महाराणाधिराज प्रतापसिंहजी व भामाशाह का सम्बन्ध देखते हैं तो यह वृत्तान्त जगजाहिर है, और इन धीर वीर प्रतापी नरकेसरी के जमाने में तो जैन धर्मगुरु बहुत मान पाये हुवे थे और जैन समाज का सितारा महाराणा के राज्य में व अन्यत्र सम्पूर्ण प्रकाश दे रहा था, जिस को ठीक तरह समझने के लिये हम आप को एक वीर शीरोमणि क्षत्रिय कुलकिरीट हिन्दूपत बादशाह महाराणाधिराज श्रीप्रतापसिंहजी की कथा

सुनाना चाहते हैं। इस नाम से तो सारी दुनिया परिचित है तथापि हम इतना जरुर समझा देते हैं कि महाराणा प्रताप-सिंहजी का प्रेम जैन तीर्थ व जैन गुरुओं की ओर परिपूर्ण था। और आप जैनसमाज के चाहनेवाले व प्रतिज्ञा के पूरे अटल नीतिमय शासन चलानेवाले प्रजाहितेच्छु एक वीरवर नरेन्द्र थे, जिन के शासन में गाय सिंह एक घाट पानी पीने की कहावत जगजाहिर है। ऐसे प्रतापी महाराणाधिराजने एक पत्र श्रीमान् जैनशासनदीपक जैनाचार्य श्रीहीरविजयसूरीश्वरजी के नाम नगर मकसुदाबाद को लिखा है, जिस की नकल पृष्ट ५९ पर दे चुके हैं।

उस परवाने से यह साफ तौर पर जाहिर है कि श्रीमान् हीरविजयसूरिजी महाराज जिन का सम्बन्ध बादशाह अकबर से परिपूर्ण था। और बादशाह के दरबार में आचार्यमहाराज श्रीहीरविजयसूरिजी के शिष्य सिद्धिचन्द्र भानुचन्द्र का आना-जाना विशेष रूप में था। और पूर्णप्रेम व मिलनसारी का गाढ सम्बन्ध बादशाह के साथ होने से आपने जीवदया बाबत व मानमर्यादा के सिलसिले में श्री आचार्यमहाराज के नाम पर परवाने बादशाहसाहब से लिखाये हैं जिस का उल्लेख "सूरीश्वर और सम्राट" नाम की पुस्तक में है। उस परवाने का हाल सुन कर महाराणासाहब को आनन्द उत्पन्न हुवा, और उस खुशी में आप एक पत्र आचार्यवर्य्य हीरविज-यसूरीश्वरजी महाराज के नाम लिखते हैं, जिस में जीवदया

का अनुमोदन करते हुवे आप फरमाते हैं कि—आप जैनसमाज में उद्योतकारी हैं इसी वजह से आपने बादशाह को जैनाबाद में उपदेश देकर जीवहिन्सा बन्ध कराई, जिस से धर्म का उद्योत हुवा ! इस के अतिरिक्त आप अपने अनुभव से लिखते हैं कि " समय देखते आप जैसे फिर न होंगे " इस से पाया जाता है कि पूर्वकाल में जैनाचार्यों की जो प्रतिभा व प्रशंसा चमत्कारों के कारण प्रसिद्ध थी उस से भी आप का पूरा परिचय था। और यह भविष्यवाणी आप की बिलकुल ठीक निकली। क्यों कि सूरिमहाराज के बाद एसे प्रभाविक कौन जैनाचार्य हुवे हैं जिन का नाम हमारे जानने में नहीं है ? एसे प्रभाविक आचार्यमहाराज की प्रशंसा बादशाह व वीरवर प्रतापी प्रखरनरेन्द्र महाराणा प्रतापसिंहजी करें यह बिलकुल ठीक है और उन आचार्य के बल प्राक्रम की ओर देखते जैनसमाज को तो मगरुर बनना चाहिये।

फिर आप फरमाते हैं कि बडे महाराणासाहब के समय आप पधारे थे, उस के बाद पधारना नहीं हुवा सो पधारना चाहिये। पाठक ! यह कितने स्नेह के बचन हैं। आमंत्रण भी प्रेममय अंतःकरण का हो तो कितना सुहावना और आदरणीय होता है। इस का भाव तो जिन को प्रेम पराकाष्ठा का अनुभव है वही ठीक तरह से जान सकते हैं। फिर आप प्राचीनकाल के सम्बन्ध को बतलाते हुवे फरमाते हैं कि आप का मान व मरियादा जो प्राचीनकाल से चली आ रही है, उसी मुवाफिक

कायम रहेगी। इस के सिवाय एक स्पष्टीकरण और करते हुवे आप फरमाते हैं कि " सुना गया है के बडे हजूर के समय वापस पधारते सामने जाने में कुछ कमी हो गई। सो काम कारणसर एसा हो गया हो तो मन में इस का अन्देशा न किया जावे अर्थात् आप नाराज न हो जांय। और आयन्दा के लिये फिर यकीन दिलाने को फरमाते हैं कि श्रीहैमाचार्यजी महाराज को जिस प्रकार माने गये हैं, और पटे, परवाने लिखे गये हैं उसी मुवाफ़िक आप को भी माने जावेंगे। और आप की गादीपर जो आवेगा उस की भी मानता रहेगा। इस के सिवाय आप के गच्छ का मन्दिर, उपाश्रय मेवाड राज्य में होगा उस की मर्यादा बराबर चली आती है और आगे भी पालन होगा; बल्के अन्य गच्छ के भट्टारकजी आदि आवेंगे, वह भी आप के गच्छ के मन्दिर उपाश्रय का पूरा मान रखेंगे। आप दैवयात्रा आदि में हमें अवश्य याद करियेगा। इस तरह के लेख से स्पष्ट पाया जाता है कि आपने गुरुमहिमा बतला कर मानमर्यादा का पूर्ववत पालन करने कि प्रतिज्ञा कर भक्तिवश हो। दैवयात्रा में स्मरण करने बाबत सूचना फरमाते हैं।

पाठक ! श्रद्धा भक्ति का कितना अच्छा ज्वलन्त उदाहरण है ? मन्दिरों की मानमर्यादा बराबर सुरक्षित रखने बाबत प्रतिज्ञा कर आपने जैन समाज को पूर्ण ऋणी बनादी है। आगे देखते हैं तो महाराणाधिराज राजसिंहजी जिन की राजधानी का मुख्य गांव राजनगर था और आप के मंत्री दयालशाह थे। महाराणा-

धीराजने एक क्रोड रुपैया खर्च कर के राजनगर के समीप राजसमुद्र की पाल बनवाई, और दयालशाहने राजसमुद्र के किनारे पर ही एक उंची पहाडी की बुलन्दी पर मन्दिर बनवाया, जो तीन मंजील का तो इस समय है और आसमान से बातें करता हो एसा इस का अनुपम दृश्य लगभग दस माइल दूर से दीखता है। इस के बनवाने में एक क्रोड रुपैया खर्च हुवा है, जिस की प्रतिष्ठा सम्वत् १७३० में आचार्य श्री विजयसागरजी महाराजने कराई, जिन की मूर्त्ति व चरण इस समय भी श्री केसरियानाथजी तीर्थ में स्थापित हैं। इसी तरह अपने बुजर्गों की चाल पर चलते हुवे महाराणाधिराज सरूप-सिंहजी व सज्जनसिंहजीने भी जैन धर्म को खूब अपनाया, और स्वर्गवासी महाराणाधिराज श्री फतेहसिंहजी की तारीफ तो हम कहां तक करें ? आप तो धर्ममूर्त्ति न्यायावतार थे, आपने जैनधर्म के साथ सम्पूर्ण तरह से तन-मन-धन से सहानुभूति प्रदान की है, और समय समय पर कई प्रकार की सहायतायें पहुंचाई हैं। हम आप के गुणों का वर्णन करने बैठें तो एक पुस्तक तैयार हो जाय।

वर्तमान महाराणाधिराज सर भूपालसिंहजी बहादूर, जी. सी. एस. आई. के. सी. आई. ई. भी बडे कृपालु हैं। आप का स्वभाव दयामय है, और आप प्रजा को सुखी देखने के इच्छुक हैं। आपने तीर्थ केसरियाजी के बाबत कई मरतबा अच्छे अच्छे हुकम निकाले हैं। और खुद भी दर्शन करने

को पधारते हैं। इस तरह जैनधर्म को समय समय पर उन्नत करने की भावना मेवाड राज्य में अधिकांश रही है, जिस का वर्णन करते बर्लिन (जर्मनी) के एक विद्वान् प्रोफेसर हेल्मुट् ग्लाजेनाप खुद के बनाये हुवे Jainismus नाम के पुस्तक में बयान करते हैं कि—

भावार्थ—उदयपूर के सिसोदिया राजाओंने जैनियों पर जो कृपादृष्टि बतलाई है उस पर से राजपूताना के हिन्दुराजा इन के साथ कैसा सम्बन्ध रखते थे सो मालूम हो जाता है। बहुत प्राचीन काल से मेवाड के राणा जैनियों को आश्रय और अनेक हक्क देते आये हैं, और इस के बदले में जैनियोंने भी इस राज की नीमकहलाल नोकरी की है। प्रतापसिंहजी को सम्राट अकबर की सेनाने हरादिये थे, उस समय प्रतापसिंहजीने अपनी भगती हुई सेना को इतर तितर कर दी थी। एसे समय में नई सेना खडी करने के लिये एक जैनीने अपना सारा धन महाराणां को सोंप दिया था। इस कारण से महाराणा प्रताप (सिंहजी) विग्रह जारी रखने के लिये और अन्त में विजय प्राप्त करने को शक्तिवान हुवे थे। उपकारवश हो कर इन राजाओंने जैनियों को भी बहुत से हक्क बखशीस किये हैं। १६९३ (सम्वत्) में महाराणा राजसिंहजीने सनद लिखदी जिस में जैनियों की जमीन उपर प्राणीहिंसा करने का निषेध किया, और इन के पवित्र स्थान में जो प्राणी जाय उस को रक्षण देना, और जिन प्राणीयों को कसाईखाने ले

जाने के हों उन ही को नही किन्तु जो वहां से भगकर छूटकर इन के रक्षण नीचे आगये हों उन को भी रक्षण देना ।

बाकरोल के एक स्थम्भ पर महाराणा जयसिंह (जी)ने खुदवाया है कि चोमासे में उत्पन्न होनेवाले अनेक जंतुओं का नाश नही हो, इस कारण से आषाढी एकादशी से लेकर शरद पूर्णीमा तक चोमासे के चार महिने में (गीनती में तीन आते हैं) कोई तलाव का पानी अणीचे नही, घाणी फेरे नही, और मिट्टी के बरतन बनावे नही ।

उपरोक्त कथन जर्मनी (बर्लिन) के प्रोफेसर का बिलकुल ठीक है, और हम भी इस तरह की कृपा का बारबार अंतः-करण से अनुमोदन करते हैं, और साथ ही आशा करते हैं कि जैनीयों के साथ मेवाड राज्य का चिरस्थायी सम्बन्ध बना रहेगा । किम्ऽधिकम् ?

हम वर्तमान महाराणाधिराज के व स्वर्गवासी महाराणांओं के अत्यन्त ऋणी हैं कि जिन्होंने आजतक जैनधर्म को व समाज को अपनाया और तीर्थ की रक्षा की, और आयंदा के लिये भी आशा करते हैं कि वर्तमान महाराणाधिराज सूर्यवंशी हिन्दुकूलसूर्य की मानप्रद पदवी के अनुकूल जैनधर्म, जैनतीर्थ व जैन समाज की रक्षा (सहायता) करने में कमी न करेंगे । और वर्तमान महाराणाधीराज की श्रद्धा अच्छे कामों की तर्फ ज्यादे रहती है, और इसी कारण आप से राजमहल में

श्रीमान् विजयधर्मसूरिजी महाराज शिष्यमण्डली सहित मिले थे तब करीब दो घन्टे तक धर्म व्याख्या का जिकर चला था। उस के बाद श्रीमान् विजयनेमसूरिजी महाराज को भी निमन्त्रण आने से आप गेस्टहाउस में पधारे थे और करीब दो घन्टे तक धर्म व्याख्या का जिकर चला था और करीब दो साल पहले आपने श्रीमान् विजयवल्लभसूरिजी महाराज को निमान्त्रित कर गुलाबबाग में दो घंटे तक व्याख्यान सुने थे। इस तरह समय समय पर आप धर्मवार्ता सुनने में बडा लक्ष देते हैं और गाढ स्नेह से योग्य पुरुषों के धर्मवचन को सुनते रहते हैं। थोडे समय पूर्व ही आपने स्थानकवासी मुनि श्री चौथमलजी महाराज के मिलने पर इन की विनती से पोष वदि १० (श्री पार्श्वनाथजी का जन्मदिन) और चेत सुदि १३ (श्री महावीर भगवान् का जन्मदिन) के सारी मेवाड में अगते पालने बाबत हुक्म फरमाया है और इन अगतों के बाबत मोहर छाप का परवाना भी लिखा दिया। इस तरह जीवदया का भाव भी आप में गहरा भरा हुवा है इसी लिये आप दयालु कहलाते हैं, और जब से राज्यशासन का काम आपने हाथ में लिया है तब से ही प्रजा के हितार्थ मदरसे, अस्पताल, सडकें, रेल्वे व अन्य कइ कामों की तर्फ लक्ष दिया है। एतदर्थ प्रजा भी आप की ऋणि है। और हम दावे के साथ कहते हैं कि भारतवर्षीय देशी रियास्तो में से यही एक रियास्त है कि जिसने समाज को बार बार सहायता पहुंचाई है, और

जैनमन्दिरों की पूजन–रक्षा के लिये जमीन कूवे आदि दे रखे हैं। और सालाना नकद रकम भी खर्चे के लिये मिलती है और कई मन्दिरो के लिये केसर, तेल व पूजारी को पगार देने का अमलदरामद अब तक बादस्तुर चला आता है। इन सब बातों को देखते पाठक सौच सकते हैं कि मेवाड राज्य का जैनियों के साथ कैसा चिरस्थाई सम्बन्ध है ? और हम यही प्रार्थना करते हैं कि यह सम्बन्ध दिन दूना रात चौगना बढता रहे।

श्रीमान् महाराणाधीराज का प्रेम तो पूर्णरुप से है लेकिन अन्य कर्मचारी जो एतद्वेषीय हैं उन की भावना भी इस तीर्थ के लिये कम नहीं है, और बाहर के जो कर्मचारी यहां आते रहे हैं उन में से कितनेक महानुभाव तो इस तीर्थ को उच्च द्रष्टि से देखते थे। जिस का हम उदाहरण बताना चाहते हैं कि–धूलेव गांव के सूरजकुंड पर एक शिलालेख अंग्रेजी का लगा हुवा है उस को देखने से मालूम होता है कि एक अंग्रेज जो फौजी अफ़सर था उस की भावना मेवाडदेश में आये बाद इस तीर्थ के लिये कैसी थी ? जिस के शिलालेख की नकल को पढिये और समझ लिजीये कि यह इस भूमि के प्राक्कर्म का अद्भुत द्रष्टान्त है।

NOTICE-

To all wham it cancerns the shrine of Rikhabdev being ane held in great sanctity by the Hindus of Gujrat and other countries gentlemen and others encamping at the place are requested not to hill peafoul or peageans pucka tank near the vellage or to kill animals.

There,
Kherwara,
22nd May 1854.

(Sd.) *JOHAN C. BROOKE,*
Captain,
Sule Hilly trackts-Mewar.

केपटन साहब शिलालेख में लिखते हैं कि सब को मालूम हो कि ऋषभदेवजी का मन्दिर गुजरात और अन्य देशों के हिन्दुओं में बहुत पवित्र माना जाता है। इसलिये इस स्थानपर जो साहब ठहरें उन से प्रार्थना है कि वह मोर आदि पक्षियों को इस के आसपास कहीं पर भी न मारें। गांव के पास जो छोटा पक्का तालाब है उस की मछलियां न पकडें और न पशुओं का वध करें अर्थात् जैनधर्म के विरुद्ध कोई कार्य न करें। इस प्रकार का शिलालेख तारीख २३ मई सन् १८५४ इस्वी में मी. जानसी बुक कप्तानने लगाया है जो इस समय भी वहां मौजूद है।